RNI NO. - UPHIN /2004/13352
Postal Regn. No. - Mathura-13/2010-2012

"मैं व्रजभक्तिके पूर्व आचार्यों और सन्तोंके चरणोंकी धूलकणके समान भी नहीं हूँ। यथार्थमें श्रील रूप-सनातन आदि षड़ गोस्वामी तथा उस रूपानुग धारामें श्रील भक्तिविनोद ठाकुर, श्रीलभक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद, मदीय गुरुपादपद्म श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज तथा श्रीलप्रभुपादके समस्त परिकर ही 'युगाचार्य' हैं। केवल अपने श्रीगौड़ीय सम्प्रदायके गौरवके लिए ही मैं 'युगाचार्य' उपाधिको स्वीकारकर अपने गुरुवर्गके चरणोंमें समर्पित कर रहा हूँ।"

—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन
GVP

।। श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ।।

श्री श्री भागवत पत्रिका

वर्ष—८ राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीश्रीरूप-रघुनाथकी वाणीकी एकमात्र वाहिका संख्या—(७-८)

विरह-विशेषांक— ५

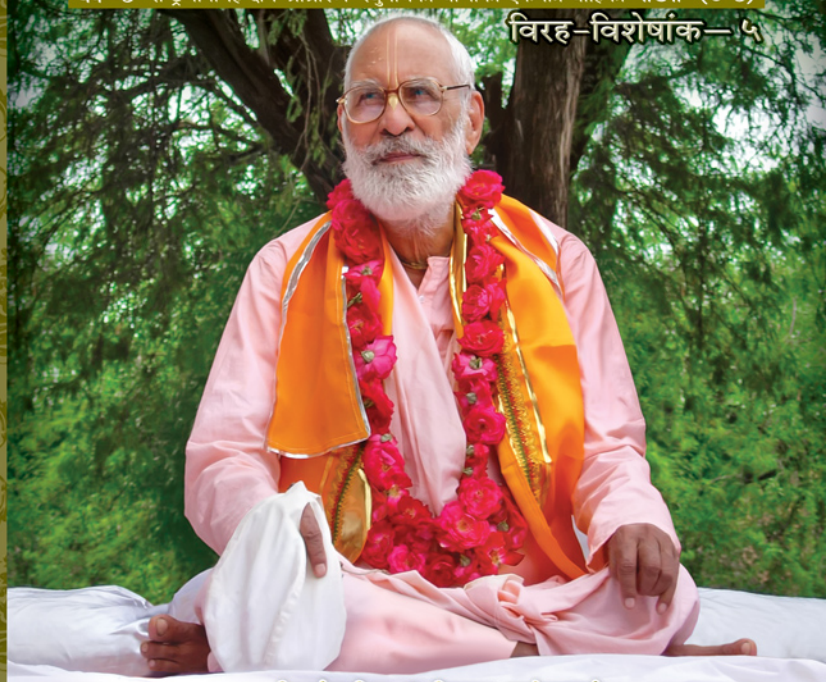

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

॥श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ जयतः॥

वर्ष ८ | श्रीगौराब्द ५२५, पद्मनाभ-दामोदर मास
वि.सं. २०६८, आश्विन-कार्तिक मास ; सन् २०११, १३ सितम्बर–१० नवम्बर | संख्या ७–८

विषय–सूची

विरह-विशेषांक (संख्या–५)

विरह–गीत.....४
–डॉ (श्रीमती) मधु खण्डेलवाल

वास्तविक मिलन और विच्छेद–दोनों ही सेवा–भावनासे उत्पन्न १९
–श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

विरह.....२७
–प्रपूज्यचरण अतीन्द्रिय भक्तिगुणाकर प्रभु

वास्तविक वस्तुको त्यागकर मनगढ़न्त धर्मका अनुसरण करना श्रील प्रभुपादकी धारा नहीं ३६
–श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

विरह–व्यथित हृदयका करुण–क्रन्दन.....३९
–श्रीपाद जितकृष्ण प्रभु

वैष्णवों द्वारा प्रदत्त पुष्पाञ्जली–३..... ४१

श्रीश्रीराधा–कृष्णके अप्राकृत प्रेमधनमें धनी–श्रील महाराजजी..... ४२
–श्रीमद् गोपानन्द वन महाराज

विरह–स्मरण..... ४५
–श्रीमद् भक्तिकमल गोविन्द महाराज

कृतज्ञतापूर्ण पुष्पाञ्जलि ४८
–श्रीपाद भक्तिवेदान्त मङ्गल महाराज

पूज्यपाद श्रील नारायण महाराजजी–सर्वश्रेष्ठ दानी एवं आदर्श महापुरुष..... ५५
–श्रीपाद भक्तिप्रसाद विष्णु महाराज

वैष्णवोचित गुणोंसे विभूषित–श्रील महाराजजी..... ५९
–श्रीपाद प्रियानन्द वन महाराज

श्रीरूप गोस्वामीकी धारामें पूर्णता अभिषिक्त–परमपूज्य महाराजजी ६२
–श्रीपाद भक्तिबान्धव हृषिकेश महाराज

"जिनकर सुयश कहल ना जाय"..... ६६
–श्रीपाद राधामाधव दास

वाणी-वैशिष्ट्य-सम्पद्–३.....६९

[श्रील गुरुदेव और कार्तिक–व्रत एवं व्रजमण्डल परिक्रमा]

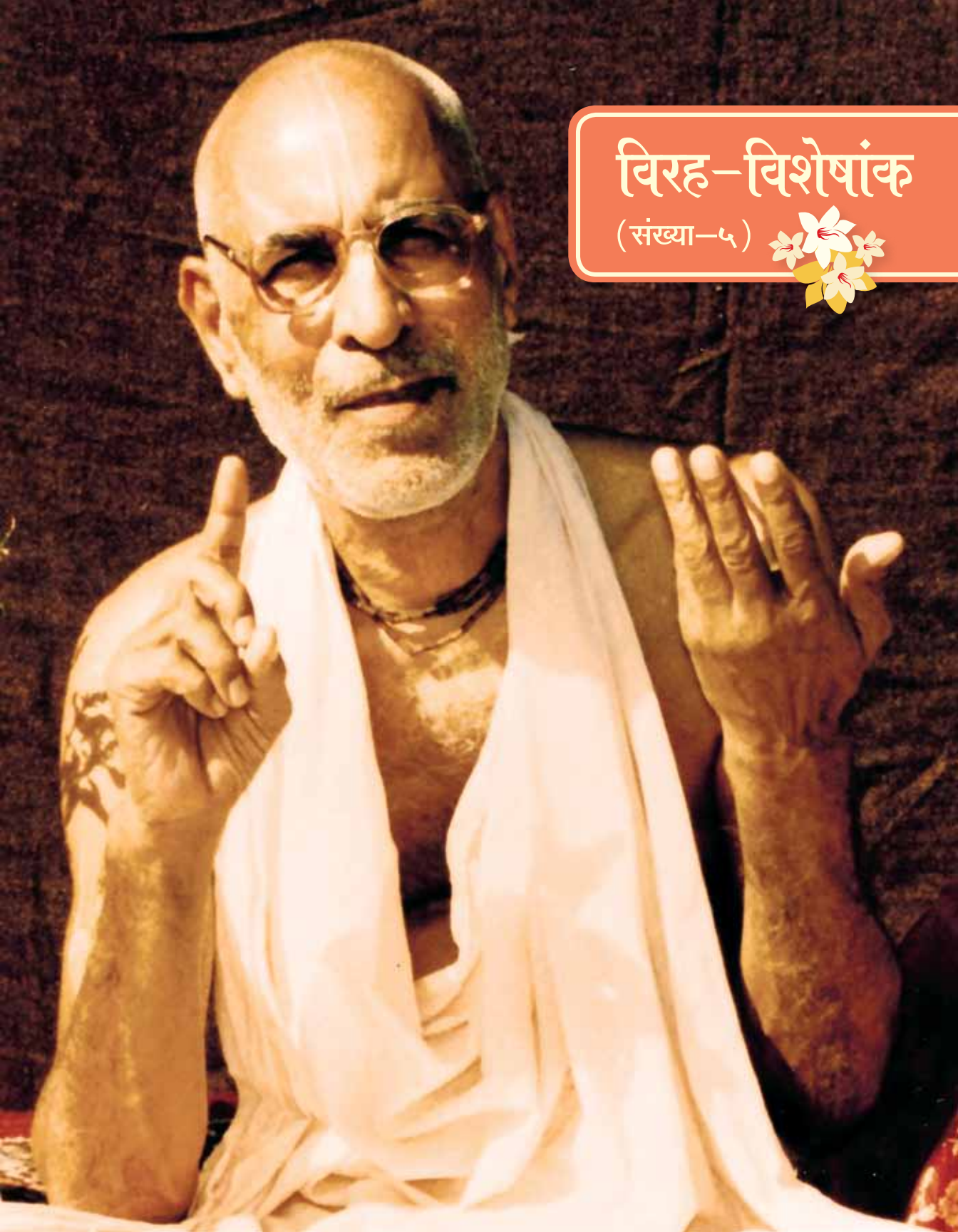

विरह-विशेषांक

(संख्या–५)

विरह–गीत

–डॉ (श्रीमती) मधु खण्डेलवाल

हे लोकपावन, जगदाराधन,
गौरकृपा–उन्मोचन–वरम्।
वात्सल्य–वर्षण के नवनीरद,
नयन पथके पथिक हों सदा॥१॥

भावार्थ–हे गुरुदेव! अभक्तोंके प्रति भी कारुण्यमयी दृष्टि रखनेके कारण भक्तजन आपको 'लोकपावन' कहते हैं, क्योंकि अभक्तोंको भक्ति की ओर उन्मुख करके आपने उनका भी कल्याण किया है। आपके आचरण, भाव, उच्च–आदर्श एवं व्यवहारका स्मरण करके जगत् नतमस्तक होकर आपकी आराधना करता है। आपने श्रीगौराङ्ग महाप्रभुकी महावदान्यतासे परिपूर्ण कथाओंका उन्मोचन करके जनमानसको गौर–कृपावारिमें सराबोर कराया है। पिताकी भाँति कृपायुक्त आपने अनेक सौभाग्यशाली जीवोंके हृदयमें भक्तिलताके बीजका आरोपण करके तथा नवीन श्यामल मेघके समान हरिकथाओंकी नव–नवायमान एवं सुरुचिपूर्ण वर्षाकर अगाध वात्सल्यके साथ उस बीजका सिञ्चन किया है। ऐसे आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें॥१॥

लौकिक व्यवहारमें परमहंस,
जन–जन प्रिय हे विश्वगुरु।
गुणदर्शन ही किया, दोष नहीं देखा कहा,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२॥

भावार्थ–हे गुरुदेव! श्रील सनातन गोस्वामीकी भाँति सारग्राही परमहंसके गुणोंसे विभूषित होनेके कारण

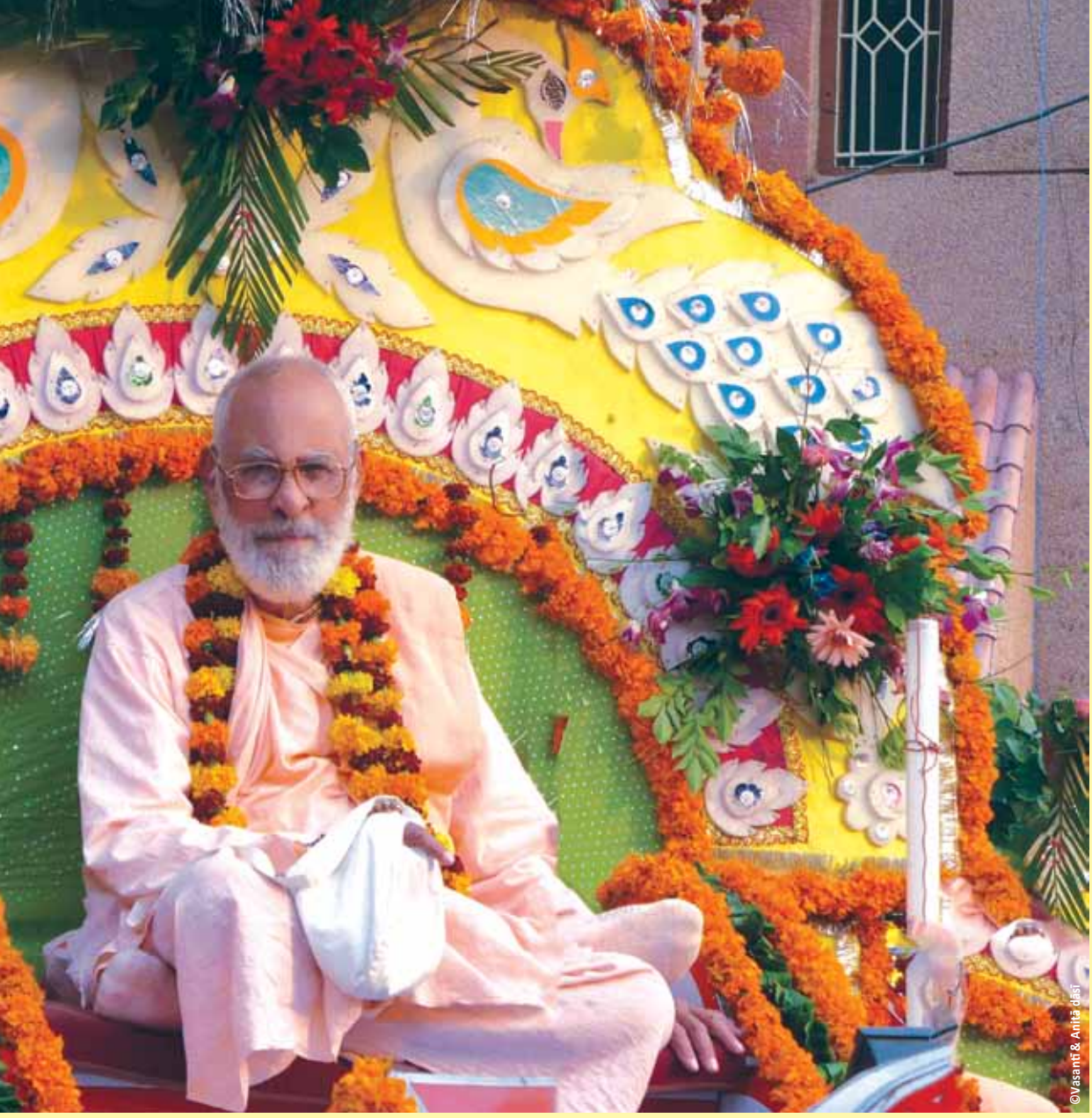

आपने लौकिक व्यवहारका निर्वाहकर सभीके प्रति अपनी आत्मीयता प्रदर्शित करके भी अपने परमहंसत्वका ही पूर्ण परिचय प्रदान किया है। आप अपने आश्रितजनोंमेंसे संन्यासियों, ब्रह्मचारियोंका कुशल–क्षेम तो पूछते ही थे, अधिकन्तु गृहस्थ–शिष्योंकी भी कुशलताका विशेष ध्यान रखते थे। आप तरुणोंको उच्च–शिक्षाके लिये उत्साहित करते थे, अस्वस्थ व्यक्तियोंको अस्पतालमें देखने जाते थे और यदि किसीकी मृत्यु हो जाती थी तो उसके परिवारी जनोंको अपने सद्वचनोंसे सन्तावना प्रदान करते थे। किसीके जन्मोत्सव तथा विवाहोत्सव इत्यादिके अवसरपर उन्हें वैदिक पद्धतिके विषयमें जानकारी देनेके साथ–साथ आप उन्हें 'लौकिक–पारलौकिक मङ्गलम् भवतु', 'कृष्णभक्ति भवतु', 'व्रजभक्ति भवतु' इत्यादि कहकर आशीर्वाद प्रदान करते थे। दिल्लीसे मथुरा आते समय

करते थे। स्वाभाविकी रूपानुगा प्रीतिको प्रदान करनेवाले आप हमारे नयन पथके सदैव पथिक बने रहें॥१८॥

©Vasudeva Kṛṣṇa dāsa

रागानुग भक्ति की प्रतिमूर्ति,
राधापरिकर ब्रजजन थे आप।
भजनानन्द में मत्त मधुप सम,
नयन पथके पथिक हों सदा॥१९॥

भावार्थ—हे गुरुदेव! इष्ट वस्तुमें बलवती तृष्णाका होना रागका लक्षण है। इष्टमें परम आवेश रागात्मिका भक्ति कहलाता है। रागात्मिका भक्तिका अनुसरण रागानुगा भक्ति कहलाता है। रागात्मिक होनेपर भी इस जगत्के साधक–जीवोंके लिए आप इसी रागानुगा भक्तिके मूर्तिमान स्वरूप थे। आप मात्र व्रजवासी ही नहीं, अपितु राधाजीके परिकर व्रजजनोंमें से एक हैं। जड़ आसक्ति रहित, अप्राकृत वैराग्य साम्राज्यके सिंहासनारूढ़, भक्ति–रसमें प्लावित आप भजनानन्द–मकरन्दमें मधुकरके समान उन्मत्त रहते थे। ऐसे आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें॥१९॥

©Śyāmarāṇī dāsī

व्रज रस–सारामृतके विधु,
विश्व परिभ्रमण किया अनेक बार।
गौर–माधुरी के विस्तारक,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२०॥

भावार्थ—'व्रजरस सार है', 'कृष्ण–रस भाविता मति', व्रजवासिजनोंमें इस रसामृतकी पूर्णता है, क्योंकि सर्वेश्वर, सर्वशक्तिमान, अनन्त ब्रह्माण्ड नायक, अखिलेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ही उनके परम आत्मीय, प्राणनाथ, प्रियतम और हृदयेश्वर हैं। हे गुरुदेव! इसी भाव–चन्द्रिकाके विधु (चन्द्र) बनकर आपने विश्व गगनमें सर्वत्र ही परिभ्रमण किया और इस प्रकारसे विश्ववासियोंके आत्म–कल्याणके लिये आनन्दामृतसे परिपूर्ण गौर–माधुरीका वितरण किया। ऐसे आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें॥२०॥

सुकृतिशाली जन हैं जो जग में,
व्रज प्रेम संदेश उन्हें दिया।
व्रजवासियों के परम सुहृद,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२१॥

भावार्थ—हे गुरुदेव! जिन्होंने हंसके समान नीर–क्षीरके विवेक द्वारा आत्मा–अनात्मा एवं हेय–उपादेयका विश्लेषणकर भगवान्के चरणारविन्दोंमें मन एवं बुद्धिको समर्पित कर दिया है, ऐसे सुकृतिशाली जनोंको आपने स्नेहसिक्त मधुर–स्वरमें सर्वोत्कृष्ट व्रजप्रेमका सन्देश देकर विरहमें रोदन करना सिखलाया है। आप व्रजवासियों के आराध्य, परम सुहृद एवं परम प्रिय हैं। ऐसे आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें॥२१॥

गौर–विधुर जनों को आह्लादितकर,
प्रेम–भूमि में उन्हें आश्रय दिया।
रूप रति के परम प्रिय,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२२॥

भावार्थ—हे गुरुदेव! श्रीगौरसुन्दरके युगलचरण ही जिनके एकमात्र धन–सम्पत्ति स्वरूप हैं और जो 'हा गौराङ्ग' पुकारते हुए निरन्तर अश्रु प्रवाहित करते रहते हैं, ऐसे विरह–विदग्ध जनोंको आपने गौरसुन्दरकी मधुर–कथाओंका श्रवण कराके आह्लादित किया। उनके हृदयोंमें व्रजकी माधुरीका सञ्चार कराके उन्हें अद्भुत प्रेम–महिमाका पाठ सिखाकर गम्भीराकी विप्रलम्भभाव–भूमिका आश्रय दिया। श्रीराधामाधवके अभिसार इत्यादि सेवाओं द्वारा विनोद करना ही जिनका

गम्भीरा मन्दिर

प्रणयी हैं"—बड़ी ही सुन्दर अभिव्यञ्जना करते थे। ऐसे आप हमारे नयन–पथके सदैव ही पथिक बने रहें॥२४॥

उज्जवल रसाख्यानमें निपुण,
भक्तिरसामृत धारामें प्रवण।
कुञ्ज युगल केलि रमण,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२५॥

भावार्थ—हे गुरुदेव! समस्त रसोंमें जो सर्वश्रेष्ठ रस है, उस उज्ज्वल रस अर्थात् राधाकृष्णके शृङ्गार–रसकी गम्भीरताका वर्णन करनेमें आप अतिनिपुण थे। गौड़ीय–प्राण–धन रूप इस उज्ज्वल भक्तिरस–पीयूषमें प्रवीण आपने इसकी ऐसी वक्तृता–धारा प्रवाहित की कि समस्त विश्व मन्त्रमुग्ध रह गया। भला ऐसा हो भी क्यों न? आप नित्य सेवाकुञ्जके अन्तर्गत श्रीविनोदकुञ्जमें विराजित श्रीश्रीराधा–विनोदविहारीको अपनी गुरुरूपा सखी विनोद मञ्जरीके आनुगत्यमें रति–क्रीड़ाका सुख पहुँचानेवाली रमण–मञ्जरी जो हैं। ऐसे आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें॥२५॥

सर्ववाञ्छासिद्धिस्वरूप हे,
हरिसङ्कीर्तन आनन्दाम्बुधिवर्धक।
ऊर्ध्व बाहु से करें सब जय जय कार,
नयन पथके पथिक हों सदा॥२६॥

भावार्थ—हे गुरुदेव! आपके श्रीचरणकमलोंमें रति ही एकमात्र सर्वश्रेष्ठ गति है और इसीसे समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इसलिये आपको सर्ववाञ्छा सिद्धिस्वरूप कहकर भक्तजन आपकी महिमा गान करते हैं। आप श्रीमुकुन्द–प्रेष्ठ हैं, क्योंकि आप श्रीहरिके नाम–सङ्कीर्तनरूपी आनन्द–सागरका वर्द्धन करनेवाले हैं। वस्तुतः शास्त्रोंमें आप जैसे आचार्यको स्वयं श्रीहरि ही कहा गया है। हम सब भक्तजन अपनी दोनों भुजाओंको ऊपर उठाकर आपकी जय–जयकार कर रहे हैं। हे प्रभो! हे देव! आपकी जितनी भी जय–जयकारकी जाये, उतनी कम है। आपकी महिमाका जितना भी वर्णन किया जाये, उतना ही कम है। आपको नयनपथके समक्ष नहीं पाकर हृदय विरह–विदग्धतामें ही निमग्न रहता है। आपसे बारम्बार यही निवेदन है कि आप हमारे नयनपथके सदैव ही पथिक बने रहें। आपकी जय हो, जय हो, जय हो॥२६॥

वास्तविक मिलन और विच्छेद—दोनों ही सेवा-भावनासे उत्पन्न

—श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

[श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके अन्तर्गत १/३/१९६१, श्रीचैतन्य मठ, मायापुरमें प्रदत्त वक्तृताके कुछेक अंश]

भक्ति-सिद्धान्त—श्रील प्रभुपादकी प्रतिमूर्त्ति

[श्रीनवद्वीप परिक्रमाके अन्तर्गत श्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुरकी समाधिके समक्ष उपस्थित होनेपर श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने वक्तृता प्रदान करते हुए कहा कि] हम जिस स्थानपर उपस्थित हुए हैं, यह श्रील प्रभुपादकी समाधि है। वे जगतमें 'भक्तिसिद्धान्त सरस्वती' के नामसे प्रसिद्ध हैं। सिद्धान्त कहनेपर भक्तिके अतिरिक्त अन्यान्य सिद्धान्त जैसे—कुसिद्धान्त, अपसिद्धान्त, हेयसिद्धान्त, आंशिक-सिद्धान्त इत्यादिको भी समझा जाता है। किन्तु वेद-पुराण-उपनिषद आदिका प्रतिपाद्य जो भक्ति-सिद्धान्त हैं, वे उन्हीं (श्रील प्रभुपाद) की प्रतिमूर्त्ति हैं।

श्रील प्रभुपाद समस्त आचार्योंके 'मुकुटमणि' थे। यह पारिभाषिक, sentimental अथवा भावुकताकी बात नहीं है, अपितु यह बात पारमार्थिक युक्तिके द्वारा ही प्रतिष्ठित है। पाश्चात्य ऐतिहासिकोंकी प्राकृत युक्तिके दृष्टिकोणसे देखनेपर भी इन महापुरुष जैसा धर्मबल, क्रिया–नैपुण्य, निरपेक्षता और निर्भीकता आदि इस जगतमें कहीं नहीं दिखलायी पड़ता।

कर्ममार्गमें लिप्त व्यक्तिके लिये श्रीगुरु–वाणीके तात्पर्यकी उपलब्धि असम्भव

महापुरुष श्रील प्रभुपाद स्वयं वाणीरूपा 'सरस्वती' थे। उन्होंने जगतमें जो पारमार्थिक विप्लव (हलचल) प्रकाशित किया है, उसीसे ही जाना जाता है कि वे भगवान्‌के द्वारा शक्त्याविष्ट पुरुष थे। आज उनकी वाणी ही हमारा एकमात्र सहारा (आश्रय) है। कर्ममार्गमें लिप्त रहनेपर उस वाणीके तात्पर्यकी उपलब्धि नहीं की जा सकती। इसीलिए निखिल शास्त्रशिरोमणि श्रीमद्भागवत् (११/२०/९) में कहा गया है–

''तावत् कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्येत यावता।
मत्कथा–श्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते॥''

[अर्थात् जबतक कर्म करते–करते कर्मके दुःखमय होनेका ज्ञान उत्पन्न होनेके कारण उन कर्मोंसे विरक्ति अथवा मेरी कथाओंके श्रवणमें श्रद्धा उत्पन्न नहीं हो जाती, तबतक नित्य–नैमित्तिक कर्मोंका आचरण करना चाहिये।]

''सन्त एवास्य छिन्दन्ति'' नामक भागवतीय वाणीके मूर्त्तिरूपमें अवतीर्ण

जबतक हम कर्ममार्गमें विचरण करेंगे, तबतक भक्तिमार्गमें भगवान्‌की कथामें हमारी श्रद्धा उदित नहीं होगी। किन्तु यहाँ **''सन्त एवास्य छिन्दन्ति मनोव्यासङ्गं उक्तिभिः''** (श्रीमद्भा० ११/२६/२६)

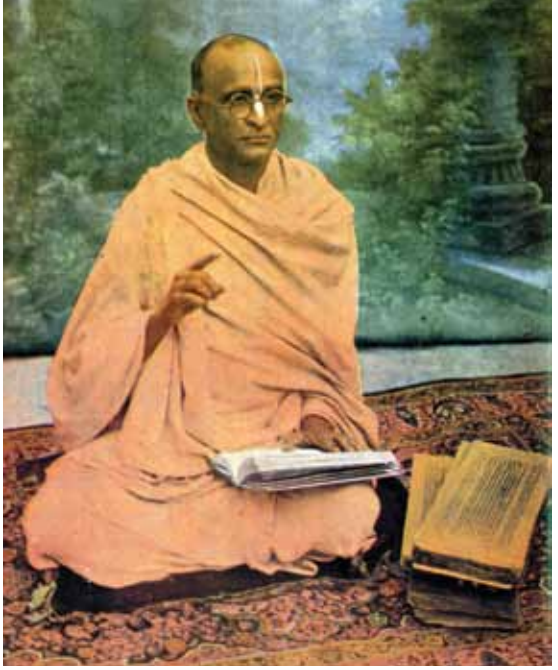

अर्थात् साधु ही उपदेश वचनके द्वारा जीवोंके मनकी विरुद्ध आसक्तिका विनाश किया करते हैं–इस भागवत–वाणीके मूर्त्तिमानरूपमें अवतीर्ण होकर श्रील प्रभुपादने धर्मजगतमें एक विप्लव (हलचल) ला दिया है।

श्रील प्रभुपाद–सत्यके निर्भीक प्रचारक

श्रील प्रभुपादने जगतके लोगोंकी प्राकृत रुचिके अनुकूल कार्य नहीं करके, रोगीके साथ मीठी–मीठी बातें नहीं करके तथा उसके दूषित घावपर हाथ नहीं फेरकर direct operation किया है। ये तेजस्वी आचार्य–केशरी सत्यके निर्भीक प्रचारक थे। असत्यके प्रति उन्होंने चिरदिन non-cooperation किया है।

कीर्त्तनके प्रभावसे ही स्मरण सम्भव

श्रील प्रभुपादने हमें बतलाया है–''कीर्त्तन प्रभावे स्मरण हइबे, सेकाले भजन निर्जन सम्भव। अर्थात् कीर्तनके प्रभावसे ही स्मरण होगा और उसी समय निर्जन–भजन सम्भव है।'' वृन्दावन, श्रीक्षेत्र (श्रीजगन्नाथ पुरी) आदि स्थानोंपर कृत्रिम स्मरण करनेवालोंका विशेष प्रादुर्भाव देखा जाता है। किन्तु श्रील प्रभुपादने 'कृत्रिम लीला–स्मरण' आदि शास्त्र–विरोधी कार्यको कभी भी

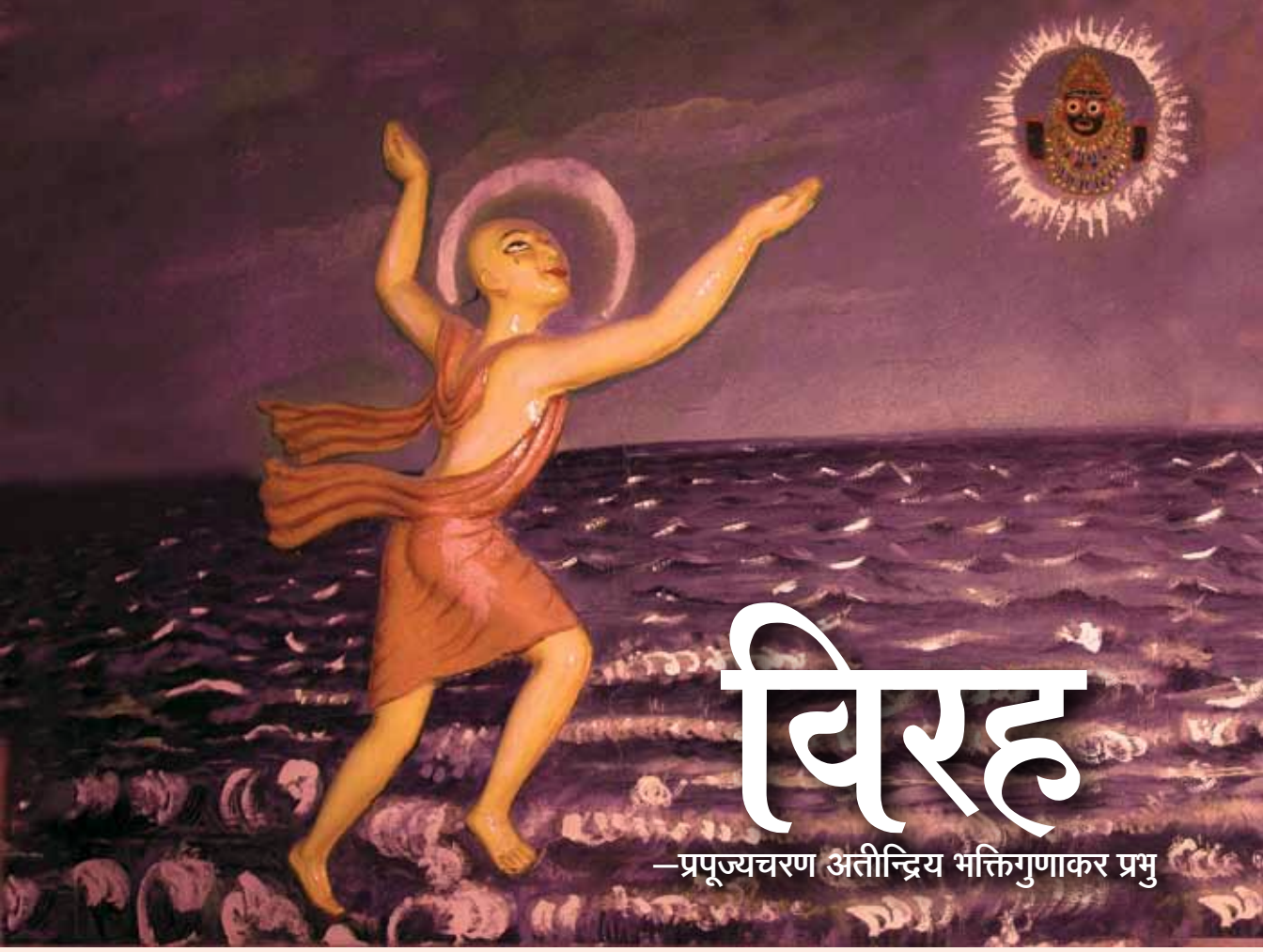

विरह

—प्रपूज्यचरण अतीन्द्रिय भक्तिगुणाकर प्रभु

सम्भोग एवं विप्रलम्भ रसका अर्थ तथा विरही व्यक्तिकी अवस्था

प्रिय वस्तुके मिलनसे चित्त सुखाकारमें परिणत हो जाता है। चित्तकी इसी सुखाकार परिणतिको ही सम्भोग–रस कहा जाता है। सम्भोगकी विपरीताकार चित्तपरिणतिका नाम विरह अथवा विप्रलम्भ–रस है एवं वह विरहभाव प्रियवस्तुके अदर्शनकालमें [अपने] स्वरूपको प्रकाशित करनेमें समर्थ होता है। प्रियवस्तुका अदर्शनकाल जितना दीर्घ होता जाता है, विरहभाव भी उतनी मात्रामें तीव्र और भीषण आकार धारण करता जाता है। अन्तमें जब विरही देखता है कि अपनी प्रिय वस्तुसे पुनः मिलनका घटित होना अत्यन्त कठिन है, तब वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ और उन्मादग्रस्त हो उठता है। हमारे प्राणवल्लभ श्रीमद्गौरसुन्दरके द्वारा गम्भीरामें मुखघर्षण, चटक पर्वतसे उतरकर समुद्रको श्रीयमुना समझकर उसमें कूदना एवं ''काँहा जाऊ काँहा पाऊ व्रजेन्द्रनन्दन अर्थात् कहाँ जाऊँ, कहाँ जाकर व्रजेन्द्रनन्दनको प्राप्त करूँ'' इत्यादि खेदपूर्ण उक्तियोंका मुखसे निकलना, भगवद्विरहमें उत्पन्न दिव्य–उन्माद–लीलाका जाज्वल्यमान उदाहरण हैं।

प्राकृत और अप्राकृत विरह

विरह दो प्रकारका होता है—प्राकृत और अप्राकृत। अनित्य धन–जनादिके अभावमें जिस प्रकारका विरह भाव उत्पन्न होता है, उसे प्राकृत एवं जो समस्त प्रकारके

गुणोंका आकर (मूल), समस्त जीवोंका सुहृत, असामान्य रूपवाले लावण्यशाली नित्य प्रभु भगवान् श्रीकृष्णके अदर्शन–भावका व्यञ्जक होता है, उसे अप्राकृत–विरह कहते हैं।

दुःखप्रद प्राकृत–विरह–रसके आस्वादककी उसके पुनः आस्वादन अथवा स्मरण तकमें अरुचि

प्राकृत–विरहमें केवलमात्र दुःखकी ही अनुभूति होती है। जिन्होंने एकबार इस दुःखप्रद प्राकृत विरह–रसका आस्वादन किया है, वे इसे हेय पदार्थ समझकर इसका पुनः साक्षात्–रूपमें उपभोग करना अथवा इसके स्वरूपको स्मृतिशक्तिकी सहायतासे अपने स्मरण–पथपर आरुढ़ नहीं करना चाहते। पुत्र–वियोगमें कातर माताको उसके आत्मीय–सुहृत सर्वदा अन्यान्य चिन्तामें निमग्न रखनेकी चेष्टा करते हैं एवं उसके परिणाम–स्वरूप वह माता पुत्रके विरहसे उत्पन्न दुःखका परित्याग करनेमें समर्थ होती है। विरह–वेगके शान्त होनेपर यदि कोई उस माताके समक्ष उसके मृत पुत्रके विषयमें पुनः कोई बात करता है, तो वह उसे ऐसा नहीं करनेका अनुरोध करती है तथा कहती हैं कि पूर्व स्मृति जगाकर वृथा कष्ट देना अनुचित है। पुत्रकी जीवित अवस्थामें माता अपने पुत्रके कमनीय मुखमण्डलको देखकर, कोमल देहको स्पर्शकर और आधे–आधे मधुर वचनों (तोतली भाषा) को श्रवणकर अत्यन्त आनन्द अनुभव करती थी, किन्तु पुत्रकी मृत्युके पश्चात् पुत्रके माध्यमसे उस प्रकारके आनन्दको अनुभव करनेका सुयोग नहीं होता और पुत्रकी स्मृति उदित होनेपर आनन्दके स्थानपर दुःख आकर उपस्थित हो जाता है। (अर्थात् सुख–पिपासु जीवके स्वार्थमें बाधा उत्पन्न होती है) इसी कारण माता अब अपने मृत पुत्रके विषयमें सुनना तक भी नहीं चाहती। पुत्रकी मृत्युके पश्चात् यदि कोई उसी मातासे कहे कि तुम्हारा पुत्र भूत–योनिको प्राप्त हो गया है, तो यह सुनने मात्रसे ही वह भयभीत होकर अपनी आत्मरक्षाके लिये तत्पर हो जायेगी।

जब नित्य पदार्थका विनाश ही नहीं है, तब उससे सम्बन्धित विरहकी सत्यता भी तात्कालिक है, वास्तविक अर्थात् सार्वकालिक नहीं।

स्वार्थसिद्धिका अभाव ही प्राकृत–विरहका एकमात्र कारण

जो पुत्र जीवित अवस्थामें अत्यन्त प्रिय प्रतीत होता था, पाठकगण देखो! मृत्युके बाद उसी पुत्रको उसकी माता भीषण काल–स्वरूप मान रही है। अतएव देखा जाता है कि जागतिक–प्रीतिके मूलमें स्वार्थपरता छिपी रहती है एवं उस स्वार्थपरताको अङ्गुलिके निर्देशसे सर्वसाधारणको बतलानेके अभिप्रायसे ही उपनिषद्में कहा गया है–

"न वा अरे पुत्रस्य कामाय पुत्रः प्रियो भवति। आत्मनस्तु कामाय पुत्रः प्रियो भवति॥"

(श्रीबृहदारण्यक उपनिषद् ४/५/६)

अर्थात् पुत्रको सुखी करनेके लिये कोई पुत्रका सुखविधान नहीं करता। पुत्रके द्वारा अपनी इन्द्रियोंकी तृप्ति होनेके कारण ही मनुष्य पुत्रसे प्रीति करते हैं।

नित्य पदार्थसे सम्बन्धित विरह तात्कालिक, वास्तविक नहीं

प्राकृत–वस्तु नश्वर है एवं इसी कारण एकबार ध्वंस होनेपर वह पुनः प्राप्त नहीं हो सकती। अतः चिर–निराशाका भाव प्राकृत विरहका आश्रयकर विरहीके हृदयमें नृत्य करता रहता है। यदि यह निराशाका भाव प्राकृत–विरहका साथी न होता और पुनर्मिलनका भाव उसके स्थानपर अधिकार कर लेता, तो ऐसा होनेपर आशाके आनन्दपूर्ण–हिल्लोलमें विरह–वेदना तेजहीन हो जाती और विरही दुःखसे मेहित नहीं होता।

पाण्डित्यकी सहायतासे दिव्य–विप्रलम्भ–रसके कणमात्रको भी समझना असम्भव

हाय बद्धजीव! विषयगर्त्तमें अवस्थान करते समय इस दिव्य–विप्रलम्भ–रसके कणमात्रको भी पाण्डित्यकी सहायतासे नहीं समझ पाओगे। "**उत्तिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान निबोधत** अर्थात् हे साधुगण! नाना प्रकारकी विषय चिन्ताओंसे निवृत्त होओ, अनर्थ परित्याग करके स्वस्वरूपमें प्रतिष्ठित होओ, महान् व्यक्तियोंकी कृपा प्राप्त करके भगवान्‌को जाननेके लिए सचेष्ट होओ'' (कठोपनिषद् २/३/१४)।

अप्राकृत–सम्भोग और विप्रलम्भ–दोनों रस ही एकात्मक पदार्थ

प्रकाश और अन्धकार स्थूल दृष्टिसे परस्पर विपरीत पदार्थ हैं, ऐसा अनुभव होनेपर भी जिस प्रकार वैज्ञानिक विचारसे इन्हें एक ही पदार्थके प्रकारभेदके रूपमें स्वीकार किया जाता है, उसी प्रकार अप्राकृत सम्भोग और विप्रलम्भ—ये दोनों रस हैतुकी बद्धदृष्टिसे विभिन्न तत्त्वोंके रूपमें अनुभूत होनेपर भी, भक्तिपूर्ण अहैतुकी चिद्–दृष्टिमें इन्हें एकात्मक पदार्थके रूपमें ही स्वीकार किया जाता है।

नित्यमुक्त भगवत्–पार्षदोंके लिये विप्रलम्भ–रस सम्भोग–रसका पुष्टिकारक

नित्यमुक्त जीव भगवत–पार्षदके रूपमें अवस्थान करते हुए सदा भगवत्–सेवामें रत रहते हैं। वे सम्भोग–रसके पात्र हैं। उन्हें विप्रलम्भ–रसका आस्वादन प्राप्त होनेपर भी वह उनके सम्भोग–रसकी ही पुष्टि मात्र है।

नित्यबद्ध–जीव ही विरह–रसके पात्रराज

भगवत–सेवा परित्यागकर नित्यबद्ध–जीवके रूपमें जो इस धराधामपर आकर अपने सुखसाधनमें व्यस्त हैं, वे ही वास्तविक रूपमें विरह–रसके पात्रराजके रूपमें सृष्ट हुए हैं। इसका कारण है कि कुछ–समयतक बद्धभूमिकामें त्रिताप–ज्वालामें विचरण नहीं करनेपर भगवत–स्मृति जागरुक नहीं होती और उससे पहले विप्रलम्भ–भावके माधुर्यका आस्वादन करनेके योग्य नहीं हुआ जा सकता। जीवोंकी बन्धन–योग्यता, विचित्र–लीला प्रकट करनेवाली अपरा–शक्तिके द्वारा सृष्ट हुई है, यह स्वतः ही प्रतिपादित होता है।

भगवद्–विरह रूपी सुशीतल समुद्रमें निमग्न होनेसे ही भोग एवं मोक्षकी प्यासकी शान्ति सम्भवपर

हे पाठकवर्ग! एकबार विचार करके देखिये कि जब हमने बद्धभूमिकामें स्वेच्छापूर्वक आगमन किया है, तब हमारे लिये कर्त्तव्यके रूपमें क्या अवशिष्ट रह जाता है? नित्यकालके लिये सुमहान, अप्राकृत विप्रलम्भ–भावमें निमज्जित होना ही क्या हमारा वह अवशिष्टरूप कर्त्तव्य नहीं है? यदि काल–विलम्ब नहीं करके हम उस भगवद्–विरहरूपी सुशीतल समुद्रमें कूद जायें, तभी अतिशीघ्र ही हमारी भोग और मोक्षकी प्यास शान्त हो जायेगी एवं **"अयि दीनदयार्द्र नाथ हे मथुरानाथ, कदावलोक्यसे** अर्थात् ओहे दीनदयार्द्रनाथ! ओहे मथुरानाथ! कब तुम्हारा दर्शन करूँगा?'' (श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य ४/१९७) ऐसी प्रार्थना करते–करते जीवनके बचे हुए दिन व्यतीत करके हम देहके अन्त होनेपर नित्यलीलामें प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त करेंगे।

विप्रलम्भ–रसको प्राप्त करनेकी शिक्षा देनेके लिये श्रीगौरसुन्दरका धराधामपर प्राकट्य

''**अद्यापिह सेइ लीला करे गौरराय, कोन–कोन भाग्यवान देखिवारे पाय॥**

अर्थात् आज भी श्रीगौरसुन्दर अपनी उन्हीं लीलाओंको कर रहे हैं, किन्तु उसे केवल कोई–कोई सौभाग्यवान जन ही देख पाता है।'' (श्रीचैतन्यभागवत मध्य २३/५१३) –इस उत्तम वचनसे हमें ज्ञात होता है कि हमारे प्राणवल्लभ श्रीगौरसुन्दर आज भी दिव्य–उन्माद दशामें इधर–उधर धावित हो रहे हैं। हमें विप्रलम्भ–रसका पात्र देखकर उस विप्रलम्भ–रसको प्राप्त करनेकी शिक्षा देनेके लिये उन्होंने इस धराधामपर प्रकट होकर अपनी दिव्य–लीलाओंका कुछ अंश हमें दिखलाया था। आइये! हम उनके द्वारा आचरित लीलाओंका अनुशीलन करते–करते देहका अन्त होनेपर उनके निजजनोंमें मिलित होकर, सेवाके उद्देश्यसे श्रीमन्महाप्रभुके पीछे–पीछे अनुगमनके लिये प्रस्तुत हों।

(साप्ताहिक गौड़ीय वर्ष–२,
संख्या–४८ से अनुवादित)

[प्रपूज्यचरण श्रीपाद अतीन्द्रिय भक्तिगुणाकर प्रभु श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके परम बान्धव गुरुभ्राता थे। श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके आतिथ्य और सेवामय जीवनसे प्रभावित होकर ही इन्होंने श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर 'प्रभुपाद' के श्रीचरणोंका आश्रय ग्रहण किया था। श्रीपाद अतीन्द्रिय भक्तिगुणाकर प्रभुने 'श्रीगौड़ीय–कण्ठहार' नामक अनुपम ग्रन्थ–रत्नका सङ्कलन करके उसे अपने परमाराध्य गुरुदेवके करकमलोंमें समर्पित किया था।]

वास्तविक अनुसरण

दर्शन–शास्त्रके वास्तविक प्रतिपाद्य विषयको पाश्चात्य जगतमें वितरण करनेकी प्रेरणा प्रदान करनेवाले श्रेष्ठ एवं निर्भीक प्रचारक

"अतिमर्त्त्य महापुरुष श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुरका जीवन ही एक उपदेश–पट (blackboard) है। श्रीगौड़ीय सम्प्रदायके वेदान्त–आचार्यभास्कर श्रीमद् बलदेव विद्याभूषण प्रभुके बाद अन्धकारसे आच्छन्न गौड़ीय–गगनको इन्होंने ही आलोकित किया है। वेदान्तके वास्तविक तात्पर्यको इनके कृपाभिषिक्त निजजनोंने ही निर्भीकभावसे प्राच्य और पाश्चात्य जगतमें विस्तृत रूपसे प्रचार किया है और कर रहे हैं। ये भारतीय दर्शनशास्त्रके वास्तविक प्रतिपाद्य विषयको पाश्चात्य जगतमें वितरण करनेकी प्रेरणा देनेवाले, तथा श्रेष्ठ एवं निर्भीक पथ–प्रदर्शक थे। असीम व्यक्तित्व सम्पन्न महापुरुषोंकी कथा साधारण मनुष्योंके लिये हृदयङ्गम करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। इसीलिए अनेक सुविधावादी लोगोंके कानोंको ऐसे महापुरुषोंका दृढ़कण्ठ (कठोर वाणी) विषके समान प्रतीत होता है।

वस्तुको त्यागकर मनगढ़न्त धर्मका करना श्रील प्रभुपादकी धारा नहीं

—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

[श्रीश्रील प्रभुपादकी तिरोभाव तिथि ९/१२/१९५८,
श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठ, नवद्वीपमें प्रदत्त वक्तृताके कुछेक अंश]

भागवतधर्म मूर्ख और सुविधावादी लोगोंके लिये नहीं

एकदिन मैंने आलोचनाक्रममें अस्मदीय श्रीगुरुपादपाद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके निकट पूछा—''श्रील प्रभुपाद जो विचारधारा जगतको देना चाहते थे, उसका अनुसरण करना क्या साधारण लोगोंके लिये सम्भव होगा?" इसके उत्तरमें श्रील गुरुपादपद्मने कहा था—''वह सम्भव हो अथवा न हो, किन्तु ऐसा कहकर वास्तविक वस्तुको त्यागकर मनगढ़न्त धर्मका अनुसरण करना श्रील प्रभुपादकी धारा नहीं है। इसी प्रसङ्गमें श्रील प्रभुपादने एकबार कहा था—भागवतधर्म मूर्ख और सुविधावादी लोगोंके लिये नहीं है। साधारण जगतमें भी क्या सभी मनुष्य एम.ए अथवा डॉक्टरेटकी डिग्री प्राप्त कर पाते हैं? प्रत्येक व्यक्ति ही डॉक्टरेटकी डिग्री प्राप्त कर सकें, इसके लिये विश्वविद्यालय अपनी निर्धारित चिन्ताधाराके मापदण्डको अर्थात् अपने पाठ्यक्रमको निम्न स्तरपर नहीं ला सकता। यदि विश्वविद्यालय ऐसा करें, तो उच्च शिक्षाका वैशिष्ट्य नहीं रहेगा।

गीता–भागवतके प्रति श्रद्धा रखनेपर भी अल्प–संख्यक लोग ही भागवत–धर्मके पालनमें प्रयासरत

"यदि एक जीव भी ठीक–ठीक रूपमें भागवतधर्मसे अवगत होनेकी सुविधा प्राप्त कर ले, तो इतना ही यथेष्ट

है। बहुत कम जीव ही आत्ममङ्गलके लिये चेतनता प्राप्त कर पाते हैं। अतः केवलमात्र कुछ ही जीवोंके इस मार्गपर आनेपर भी इसमें दुःखी होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इसका कारण है कि विद्यालयमें उत्तम छात्रोंकी संख्या कम ही होती है। आकाशमें सुशीतल आलोक प्रदान करनेवाला चन्द्र केवल एक ही है। जगतमें मूल्यवान धातुओंकी संख्या भी कम है। इसी प्रकार अल्पसंख्यक लोग ही भागवतधर्मका पालन करनेके लिये प्रयासरत हैं, अतः इसके लिये दुःख करनेकी कोई बात नहीं है। यद्यपि जगतमें प्रत्येक मनीषीवृन्द ही, यहाँतक कि राजनीतिज्ञ, समाजनीतिज्ञ आदि मनुष्य भी गीताके प्रति श्रद्धा रखते हैं, तथापि इसी गीता (७/३) में भगवानने कहा है—

मानुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥

[अर्थात् असंख्य जीवोंमें कदाचित् कोई मनुष्य जन्म प्राप्त करता है, सहस्र–सहस्र मनुष्योंमें–से कोई–कोई सिद्धिके लिए यत्न करते हैं और सहस्र–सहस्र सिद्धोंमें–से भी कोई एक मुझे अर्थात् मेरे भगवत्–स्वरूपको तत्वतः जानते हैं।]

"सर्वशास्त्रशिरोमणि श्रीमद्भागवत (६/१४/३–५) में भी कहा गया है—

रजोभि समसंख्याताः पार्थिवैरिह जन्तवः।
तेषां ये केचनेऽन्ते श्रेयोः वै मनुजादयः॥
प्रायो मुमुक्षवन्तेषां केचनैव द्विजोत्तम।
मुमुक्षुणां सहस्रेषु कश्चिन्मुच्येत सिध्यति॥
मुक्तानामपि सिद्धानां नारायण–परायणः।
सुदुर्लभः प्रशान्तात्मा कोटिष्वपि महामुने॥

[इस जगत्में जिस प्रकार पार्थिव परमाणु (धूलके कण) असंख्य हैं, उसी प्रकार जीव भी असंख्य हैं। इन समस्त जीवोंमें मनुष्योंकी संख्या बहुत कम है और उनमें भी कोई–कोई ही धर्मका आचरण किया करता है।

हे द्विजोत्तम! उक्त धर्मका आचरण करनेवालोंमें बहुत ही कम ऐसे होते हैं, जो मोक्षकी इच्छा करते हैं। हजारों मुमुक्षुओंमें भी कदाचित् कोई व्यक्ति ही गृह आदि असत्सङ्गसे मुक्त हो पाता है। इन असत्सङ्गरहित व्यक्तियोंमें भी कदाचित् कोई व्यक्ति ही भगवान्के तत्त्वको जान पाता है।

हे महामुने! इस प्रकार करोड़ों मुक्तों एवं सिद्धजनोंमें भी प्रशान्तात्मा नारायण–परायण भक्त अत्यन्त दुर्लभ है।]

हम निर्भीक होकर समस्त विश्वमें प्रचुर परिमाणमें प्रचार करनेका प्रयास करेंगे, किन्तु आत्मचेतनाको भूलकर नहीं।

"अतः इस विषयमें चिन्ताकी कोई बात नहीं है। कलि–कवलित जीव मायाकी ओर धावित होंगे ही। ऐसी अवस्थामें भी हम निर्भीक होकर समस्त विश्वमें प्रचुर परिमाणमें प्रचार करनेका प्रयास करेंगे, किन्तु आत्मचेतनाको भूलकर नहीं।"

श्रील प्रभुपाद हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें, जिससे हममेंसे प्रत्येक व्यक्ति ही उनके कृपा–आशीषको प्राप्त करनेके लिये प्रयासरत हों।

(श्रीगौड़ीय–पत्रिका वर्ष–२०, संख्या–११ से अनुवादित)

विरह–व्यथित हृदयका करुण–क्रन्दन

–श्रीपाद जितकृष्ण प्रभु

[श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी विरह तिथिके उपलक्ष्यमें लिखित पुष्पाञ्जलिके कुछेक अंश]

परमाराध्यतम गुरुपादपद्म ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज आज हमारे बीचमें रहनेपर भी नहीं हैं, इस विरहवार्त्ताके समस्त दिशाओंमें घोषित होनेके साथ–ही–साथ रूपानुग गुरुवर्ग और उनके अनुगत भक्तवृन्द विरहमें मोहित हो गये हैं। आचार्य–सिंहके अदर्शनमें विरह–व्यथाने हृदयके भीतर गुप्त क्रन्दनका सुर धारण कर लिया है।

श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रतिष्ठाता नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद परमहंस आचार्यवर्य अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके नित्यलीलामें प्रवेशको जागतिक दृष्टिसे एकवर्ष पूर्ण हो गया है। उनके विरह–उत्सवमें योगदान करनेके लिये देश–देशान्तरसे भक्तवृन्द समागत अथवा समुपस्थित हुए हैं।

शोक और विरहमें पार्थक्य

कहीं ऐसा न हो कि आज इस उत्सवके दिन हम शोक और विरहको एक ही समझ बैठें। जागतिक दृष्टिकोणसे दोनों ही देखनेमें एक ही प्रकारके होनेपर भी इनमें प्रचुर पार्थक्य विद्यमान है। शोकके द्वारा भवबन्धन दृढ़तर होता है और विरहके द्वारा भक्त और भगवान्‌की स्मृति–स्फूर्त्ति होती हैं; शोक शुद्रत्व भावकी वृद्धि करता है और विरह त्रिगुणसे अतीत अतिमर्त्य चरित्रकी ओर धावित कराके कृष्ण–सान्निध्यमें पहुँचा देनेकी प्रेरणा जगाता है। शोक स्वजनोंके वियोगमें उच्च–क्रन्दनका रूप धारणकर आकाश–वायुको मुखरित करता है एवं आर्थिक और सामाजिक उपकारसे वञ्चित होनेके कारण व्यक्तिको शोकाकुल–करके भविष्यकी चिन्तामें निमग्न कर देता हैं। विरह किन्तु शोकके विपरीत धर्मवशतः भक्तको श्रीगुरु–वैष्णवोंके अदर्शनसे उत्पन्न वेदना दान करता हैं; श्रीगुरुपादपद्मके श्रीमुखनिःसृतवाणीके श्रवणके सौभाग्यसे वञ्चित करता है, एवं श्रीभगवान्‌के अनेक निगूढ़–तत्त्वोंकी कथाएँ, जो कभी भी प्रकाशित नहीं हुईं थीं, उन सभी तत्त्व–कथाओंसे वञ्चित करता है। यही वेदना है—यही दुःख है और यही विरह है। अर्थात् हाय! हाय! लगता है, मैं इस जीवनमें अब श्रीगुरुपादपद्मके सान्निध्यमें आकर श्रीहरिकथाके श्रवणके सुखसे वञ्चित होकर पुनः संसाररूपी विषय–सागरमें निमज्जित हो गया, इत्यादि। विरहमें इस प्रकारकी खेदोक्ति होती है। अतः शोक बन्धनका कारण होता है एवं विरह मुक्तिका पथ प्रशस्त करता है।

वैष्णवों द्वारा प्रदत्त पुष्पाञ्जली–३

श्रीश्रीराधा–कृष्णके अप्राकृत प्रेमधनमें

'सङ्गके लिये प्रार्थना'

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर स्वरचित ''कबे श्रीचैतन्य मोरे करिबेन दया'' नामक कीर्त्तनके एक पदमें वैष्णव–चरणोंमें निवेदन करते हुए कह रहे हैं–''**कृपा करि सङ्गे लह एइ अकिञ्चने** अर्थात् हे वैष्णव ठाकुर! इस अधमका निवेदन है कि आप कृपा करके इस अकिञ्चनको अपने सङ्गमें ले लें।'' वैष्णव परम दयालु होते हैं, उनकी कृपासे ही विष्णु–भक्ति प्राप्त हो सकती है। श्रील भक्तिविनोद ठाकुरजीके इस पदमें जो दैन्य भाव है, मैं उसी दैन्य भावका अनुसरण करते हुए श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज जैसे परम भागवतसे यही प्रार्थना करता हूँ कि वे मुझे अपने सङ्गमें ले लें अर्थात् अपनी चित्तवृत्तिकी भाँति मेरी चित्तवृत्तिको भी भगवद्–चरणारविन्दमें नियुक्त कर दें।

वैष्णवोंके गुणगानमें ही सम्पूर्ण अस्तित्वकी सार्थकता

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके विषयमें, उनकी स्मृतिमें कुछ कहना मेरे लिये अत्यन्त मङ्गलमय है। विष्णु–भक्तोंका गुणगान करना ही जीवनका परम आदर्श है। जिस जिह्वासे विष्णु–वैष्णवोंका गुणगान होता है, वही जिह्वा ही सार्थक है। श्रील महाराजजी एक ऐसे ही महात्मा थे, जिनके विषयमें गुणगान करनेसे वास्तवमें एक व्यक्ति केवल अपनी जिह्वाको ही नहीं, अपितु अपने सम्पूर्ण अस्तित्वको ही सार्थक कर सकता है। उनके स्मरण–मात्रसे ही गङ्गा–यमुनामें स्नान करना हो जाता है। गङ्गाके तो स्पर्शसे ही पवित्र हुआ जा सकता है, किन्तु श्रील महाराजजीके अगाध चरित्रके लेशमात्रका ही स्मरण करनेमात्रसे पवित्रताकी प्राप्ति होती है। यद्यपि मुझ जैसे दीन व्यक्तिके लिये उनके विषयमें स्मरण करना अत्यन्त कठिन

है, तथापि यदि वे मेरे प्रति कृपा करें, तो मैं उनके विषयमें कुछ कहनेका प्रयास कर सकता हूँ।

बृहद् व्यक्तित्वसे सम्पन्न

जब बृहद् (महान् व्यक्ति) कृपापूर्वक अपना सङ्ग प्रदान करता है, तभी अणु (क्षुद्र) बृहद्का सङ्ग एवं दर्शन करनेका सामर्थ्य प्राप्त करता है तथा तभी अणु होनेपर भी वह बृहदका परिचय दे सकता है। अतः मैं अणु होनेपर भी महाराजजी जैसे बृहद् व्यक्तित्वके विषयमें जो कुछ भी कह रहा हूँ, यह उन्हींकी ही कृपाका फल है।

धनी—श्रील महाराजजी

—श्रीमद् गोपानन्द वन महाराज

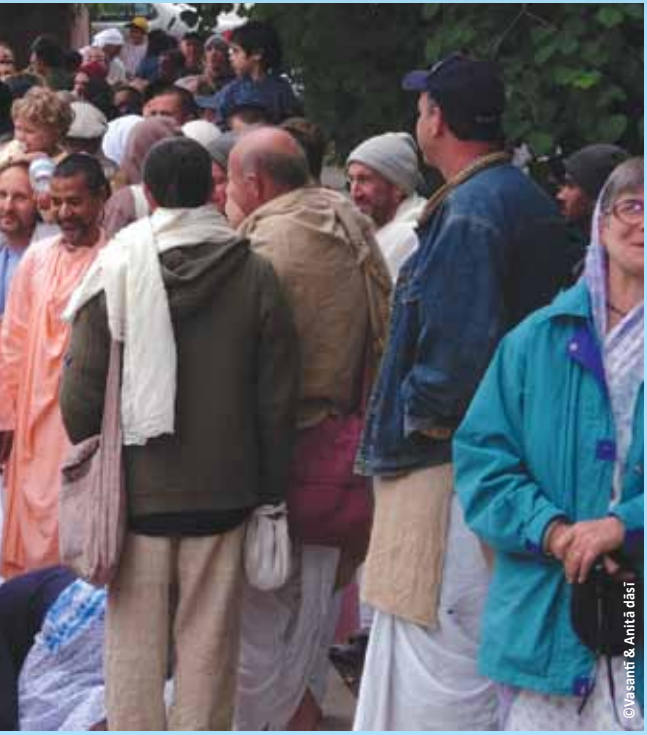

श्रीमन्महाप्रभुकी वाणीके विशुद्ध प्रचारक

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीने देश—विदेशमें प्रचार करके श्रीचैतन्य महाप्रभुके आदर्शको जगतमें स्थापित किया है। यह श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजीकी महिमा ही है कि उन्होंने अनेकानेक अभक्तोंको भी भक्त बना दिया है। श्रील महाराजजीके आचार—विचार तथा वाणीसे आकर्षित होकर आये अनेकानेक उच्च—शिक्षित तथा भौतिक सुख—सुविधाओंसे सुसम्पन्न पाश्चात्य देशवासियोंको अभिमान—रहित वैराग्यपूर्ण जीवन निर्वाहित करनेके साथ—साथ शुद्ध रूपमें उनके भजनके प्रयासको देखकर मैं स्वयंको धिक्कार देता हूँ कि भारत—भूमिमें जन्म लेकर भी मुझमें इतनी भक्ति—भावना जागृत नहीं हुई, जितनी श्रील महाराजजीके प्रभावसे इनमें जागृत हो गयी है। वास्तवमें यह श्रील महाराजजीकी ही महिमा है कि उन्होंने पाश्चात्य देशवासियोंके समक्ष श्रीमन् महाप्रभुकी वाणीका विशुद्ध रूपमें कीर्त्तन करके उन्हें भक्तिमें पागल बना दिया है। श्रील महाराजजीकी महिमाका भली—भाँति वर्णन करना मेरे जैसे व्यक्तिके लिये असम्भव है। मेरे जैसे किसी व्यक्तिका तो कहना ही क्या, स्वयं भगवानने भी उद्धवजीसे कहा है कि तुम्हारे जैसे भक्तोंकी महिमाका गान करना मेरे लिये अत्यन्त कठिन है।

सभीके पारमार्थिक उत्थानमें सदैव प्रयासरत

मैंने अपने जीवनमें श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके आदर्शको बहुत निकट एवं बहुत सूक्ष्मरूपसे देखा है। वे सामान्य—से—सामान्य व्यक्तिके प्रति भी बहुत ही कृपा करते थे। वे छोटेको छोटा, अधमको अधम अथवा निकृष्टको निकृष्टके रूपमें नहीं देखते थे, बल्कि समभावसे सम्पन्न होनेके कारण वे अपनी पवित्र कृपादृष्टिसे सभीके पारमार्थिक उत्थानमें सदैव प्रयासरत रहते थे।

अभिमान रहित

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी मेरे जैसे क्षुद्र व्यक्तिका भी परम आदर करते थे। मुझसे बहुत ही प्रेम

विरह–स्मरण

—श्रीमद् भक्तिकमल गोविन्द महाराज

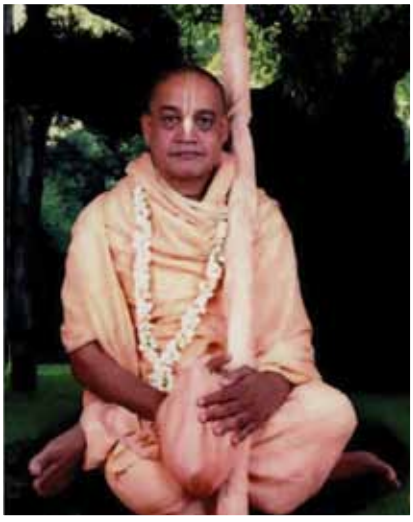

महान् श्रीरूपानुगाचार्य

मेरे दीक्षा गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवैभव पुरी गोस्वामी महाराज तथा मेरे शिक्षा एवं संन्यास गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिजीवन जनार्दन गोस्वामी महाराजका नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके साथ अत्यन्त स्नेहमय सख्य भाव था एवं ये परस्परमें अत्यन्त प्रेमपूर्वक व्यवहार किया करते थे। इसी कारण श्रीश्रीमद्भक्तिवैभव पुरी गोस्वामी महाराज एवं श्रील भक्तिजीवन जनार्दन गोस्वामी महाराजजीका श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजीके साथ घनिष्टतापूर्ण सम्बन्ध था।

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी महान् श्रीरूपानुगाचार्य थे। उनकी गुरुनिष्ठा एवं गुरु–सेवा अत्यन्त प्रशंसनीय है।

सेवा–कार्योंमें सहयोग प्रदान करनेवाले

जब मेरे गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिवैभव पुरी गोस्वामी महाराजजी मथुरामें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें पधारते थे, तो उस समय श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजी अत्यन्त हर्षपूर्वक उनकी सेवा–शुश्रूषादि किया करते थे। श्रील गुरु महाराजजीने बहुत बार श्रील नारायण गोस्वामी महाराजको अपने साथ लेकर अनेक स्थानोंपर प्रचार एवं विग्रह–प्रतिष्ठादिका कार्य सम्पन्न किया था। अगस्त

कृतज्ञतापूर्ण पुष्पाञ्जलि

—श्रीपाद भक्तिवेदान्त मङ्गल महाराज

मङ्गलाचरण

सर्वप्रथम मैं अपने परमाराध्य गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके श्रीचरणकमलोंमें अनन्तकोटि साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणामपूर्वक उनकी अहैतुकी कृपाकी भिक्षा माँगता हूँ। तदुपरान्त मैं अपने शिक्षागुरु परमपूज्यपाद नित्यलीला प्रविष्ट अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज एवं श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके श्रीचरणकमलोंमें अनन्तकोटि साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम करते हुए उनकी अहैतुकी कृपाकी प्रार्थना करता हूँ। समस्त वैष्णवोंके चरणोंमें दण्डवत् प्रणामपूर्वक सब वैष्णवोंकी कृपा प्रार्थना करता हूँ।

अतिमर्त्य महापुरुषके महिमा-गानमें अयोग्यता

परमपूज्यपाद श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी अतिमर्त्य महापुरुष थे। मुझमें उनके अलौकिक चरित्रके सम्बन्धमें कुछ कहने योग्य विद्या-बुद्धि नहीं है। फिर भी गुरु-वैष्णवोंका गुणगान करनेसे जीवोंका त्राण होता है, इसी आशासे मैं कुछ कहनेका प्रयास कर रहा हूँ।

'तृणादपि' श्लोककी प्रतिमूर्त्ति एवं श्रीमन्महाप्रभुकी धारामें वास्तविक लखपति

श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजीकी श्रीगुरुमें निष्ठा और श्रीहरिनाममें प्रगाढ़ रुचि थी। वे प्रतिदिन तीन बजे उठकर हरिनाम करते थे। वे श्रीमन्महाप्रभुके वास्तविक लखपति [प्रतिदिन भगवान्‌के एक लाख नामों अर्थात् चौंसठ मालाका जप करनेवाले] भक्त थे। वे मठके समस्त सेवा-कार्यों, ग्रन्थ-लेखन तथा प्रचार कार्यमें अत्यधिक व्यस्त रहनेपर भी प्रतिदिन एक लाख नाम अवश्य ही करते थे। श्रील महाराजजी श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके द्वारा कथित 'तृणादपि' श्लोककी प्रतिमूर्त्ति थे। एकबार किसीके अनुरोधसे श्रील महाराजजी हमें अपने साथ लेकर

किसी नये घरमें प्रचारके उद्देश्यसे गये और वहाँपर घरके सदस्योंने अज्ञ होनेके कारण श्रील महाराजजीका ठीकसे सम्मान नहीं किया, जिसे देखकर हम सभी उस घरके सदस्योंको कुछ कहना ही चाहते थे कि श्रील महाराजजीने हमें पहले ही कहना प्रारम्भ कर दिया कि जानते हो, वैष्णव समाजमें एक प्रवाद वचन है—**"वैष्णव होइते मने छिल बड़ साध। तृणादपि श्लोकेते पड़े गेलो बाध॥"** [अर्थात् यद्यपि मनमें वैष्णव बननेकी बड़ी अभिलाषा थी, किन्तु 'तृणादपि' श्लोकका पालन करनेकी बात सुनकर उस अभिलाषाके पूर्ण करनेमें बाधा उत्पन्न हो गयी अर्थात् 'तृणादपि' श्लोकमें दी गयी शिक्षाको पालन करनेमें असमर्थ होनेके कारण भजनमें बाधा उपस्थित हो गई।] अतः शान्त रहो, नये लोग हैं, जब कुछ परिचित हो जायेंगे, तब थोड़ी न ऐसा करेंगे। इस प्रकार केवल एक नहीं अनेकों उदाहरण हैं जिससे श्रील महाराजजीने अपने आचरणके द्वारा हमें 'तृणादपि' होनेकी शिक्षा दी है। अज्ञ व्यक्तियोंका तो कहना ही क्या, विज्ञ वैष्णव–सन्यासी इत्यादिके द्वारा भी श्रील महाराजजीके प्रति बड़ी–से–बड़ी बात हो जानेपर भी श्रील रूप गोस्वामी, श्रील सनातन गोस्वामी एवं श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी आदि गोस्वामियोंके जीवन–चरित्रके पुंखानुपुंख वर्णनके द्वारा श्रील महाराजजी हम लोगोंको अनेकानेक प्रकारकी शिक्षाएँ प्रदान करते थे। इस प्रकारसे श्रील महाराजजी केवल मुखसे बोलकर ही नहीं, बल्कि स्वयं उसका आचरण करके हमें सदैव 'तृणादपि' श्लोकका पालन करते हुए हरि–गुरु–वैष्णवोंके आनुगत्यमें भजन करनेकी प्रेरणा प्रदान करते थे।

सेवा–विग्रह

एक समय था कि जब श्रील महाराजजी प्रतिदिन तीन–चार बार हरिकथाका परिवेषण करते थे। अपनी हरिकथाके माध्यमसे वे सबके मनमें हरि, गुरु और वैष्णवोंकी सेवा–वृत्तिको जागृत कर देते थे। श्रील महाराजजी स्वयं सब समय हरि–गुरु–वैष्णवोंकी सेवामें निमग्न रहा करते थे एवं अन्य सब मठवासियोंको भी सब समय हरि–गुरु–वैष्णवोंकी सेवामें निमग्न रहनेके लिए उपदेश दिया करते थे।

पूज्यपाद श्रील नारायण महाराजजी—सर्वश्रेष्ठ दानी एवं आदर्श महापुरुष

—श्रीपाद भक्तिप्रसाद विष्णु महाराज

इस जगतमें एकमात्र श्रीकृष्ण–कथारसका पान करवानेवाले लोग ही महान् दानी होते हैं। वैष्णव–सङ्गमें जन्म–जन्मान्तरका अज्ञान दूर होनेपर जीवका वास्तविक–स्वरूप प्रकाशित होता है। उस समय जीवके समस्त अनर्थ, दुराचार, पापाचार इत्यादि दूर हो जाते हैं। अनर्थ दूर होनेके साथ–ही–साथ उनके दुःख, कष्ट, दुर्गति तथा बन्धन भी समाप्त हो जाते हैं। क्षुद्र जीव महान् आत्मा बन जाता है। उसका जीवन हरिभक्तिमय हो जाता है एवं जगत्का तो कहना ही क्या, स्वयं भगवान् जगन्नाथ भी उसके वशीभूत हो जाते हैं।

'भूरिदा जनाः' की उपाधिसे विभूषित

केवलमात्र वैष्णव–आचार्यके अतिरिक्त एक क्षुद्र, नीच, दुःखी एवं अज्ञानी बद्धजीवका सर्वोत्तम मङ्गल कौन कर सकता है? जगत्के माता–पिता, बन्धु–बान्धव इत्यादि हमें संसार–बन्धनमें डाल सकते हैं, दुःखी कर सकते हैं, हमारा सर्वनाश कर सकते हैं, गलत आचरणकी शिक्षा दे सकते हैं, गलत खान–पान, व्यवहार आदिकी शिक्षा दे सकते हैं, किन्तु हमें वास्तविक सुख–शान्तिका मार्ग नहीं बतला सकते। सुख–शान्तिका मार्ग तो अपनी वीर्यवती हरिकथाके माध्यमसे केवलमात्र साधुजन ही प्रशस्त करते हैं। इसी कारण श्रीकृष्णकथाका पान करानेवाले ही इस जगतमें हमारे सबसे महान् मित्र हैं। इसी शृंखलामें अर्थात् जगत् जीवोंके ऐसे महान्

बान्धवोंमें परम पूजनीय श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी एक विशेष महान् दानी आचार्य रहे। उन्होंने सम्पूर्ण विश्वमें श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके द्वारा आचरित एवं प्रचारित शुद्ध–भक्तिरसकी धाराकी वर्षा करके व्रजगोपियोंके द्वारा कथित **'भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जना:'**[१] (श्रीमद्भा॰ १०/३१/९) की उपाधिसे विभूषित हैं। श्रील नारायण महाराजजीके प्रचारने वर्तमान कालके गौड़ीय–रूपानुग–विचारधारामें प्रविष्ट भक्तोंको एक नयी उमङ्ग, एक नया उत्साह तथा एक ऐसा दृढ़ विश्वास प्रदान

किया है, जिससे वे श्रील महाराजजीके आचार–विचार द्वारा प्रदर्शित मार्गके अतिरिक्त अन्यान्य मार्गोंपर कभी किसी भी परिस्थितिमें नहीं चलेंगे।

१ हे कृष्ण! जो व्यक्ति इस संसारमें तुम्हारी लीलाकथाका कीर्त्तन करता है, वही सर्वश्रेष्ठ दाता है।

श्रील महाराजजीका मेरे गुरुमहाराजजीसे सम्बन्ध

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी मेरे गुरुमहाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराजजीकी आविर्भाव तिथिके उपलक्ष्यमें मठके बहुतसे ब्रह्मचारियोंके साथ हमारे

वृन्दावनके मठमें पधारते थे तथा हमारे गुरु महाराजजीके प्रति अपने गुरुपादपद्मवत् (समान) श्रद्धा पुष्पाञ्जलि समर्पित करते थे। वे सर्वप्रथम श्रील गुरुमहाराजके गलदेशमें पुष्पमाला प्रदान करनेके उपरान्त साष्टाङ्ग दण्डवत प्रणाम करके उनके श्रीचरणकमलोंका स्पर्श करते थे।

जब श्रीवृन्दावनमें श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठ नहीं बना था, उन कई वर्षों तक श्रील नारायण महाराजजीने श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ (वृन्दावन) में रहकर ही व्रजमण्डलके अन्तर्गत वृन्दावनकी परिक्रमा की थी। उस समय मुझे महाराजजीकी मधुर–सरल, किन्तु सर्वोच्च विचारोंसे परिपूर्ण हरिकथाको श्रवण करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। श्रील महाराजजीकी प्रत्येक बातमें, उनकी प्रत्येक क्रियामें कुछ–न–कुछ शिक्षाकी प्राप्ति होती थी। उन्हीं दिनोंमें मुझे उनकी सेवा करनेका भी अवसर प्राप्त होता था। एक समय हमारे वृन्दावन स्थित मठमें अपनी परिक्रमा पार्टीके साथ वासकालमें किसी एक भक्तने श्रील

वैष्णवोचित गुणोंसे विभूषित— श्रील महाराजजी

—श्रीपाद प्रियानन्द वन महाराज

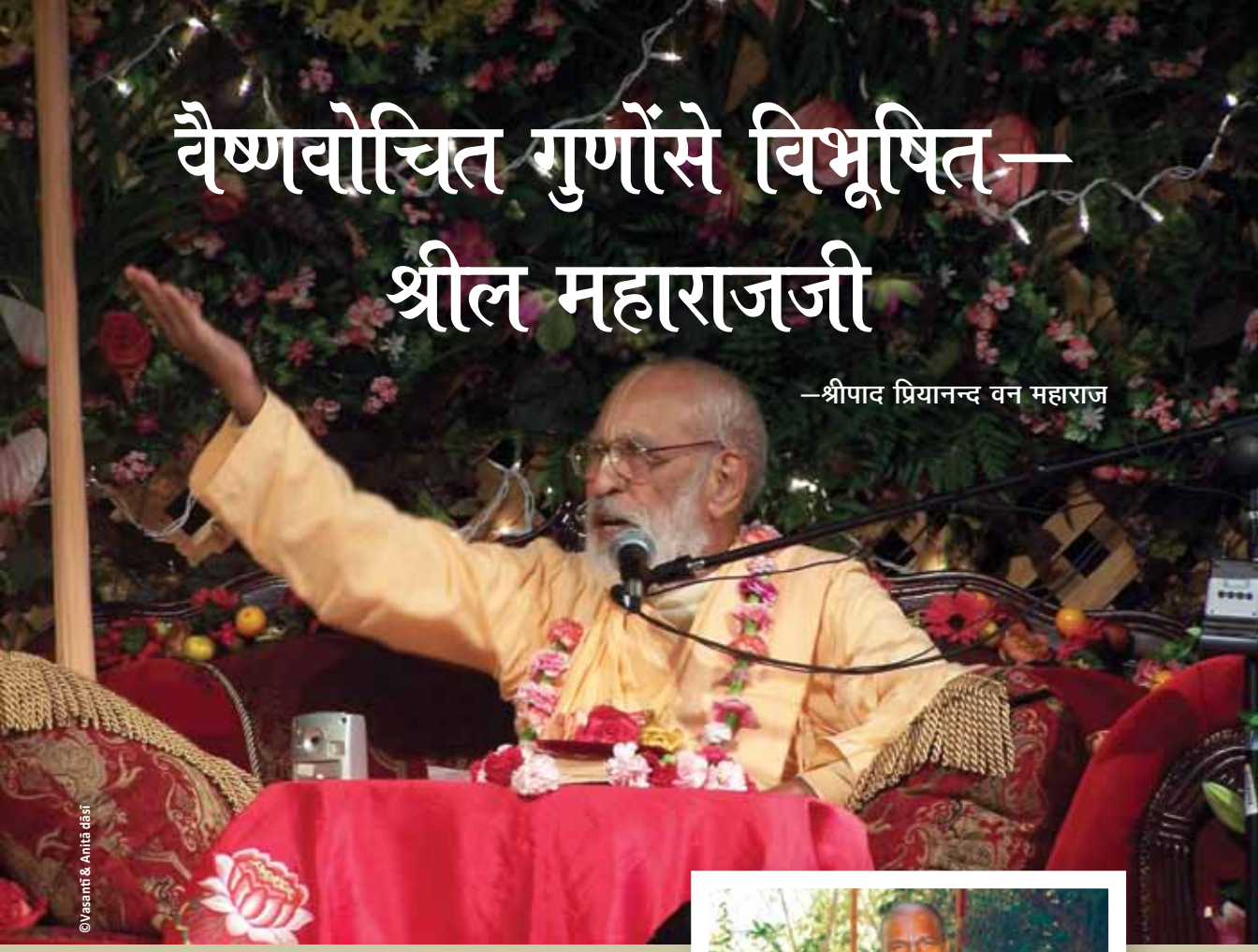

गङ्गाजलके द्वारा गङ्गापूजा

"**वैष्णवेर गुणगान करिले जीवेर त्राण** अर्थात् वैष्णवका गुणगान करनेसे जीवोंका त्राण होता है।"—प्रभुपादके महिमासूचक कीर्त्तन 'जय रे जय रे जय परमहंस महाशय' में कही गयी इस बातका रहस्य एकमात्र वैष्णव ही जानते हैं। मैं स्वयं अपने ज्येष्ठ गुरुभ्राता अर्थात् गुरुभ्राता सदृश श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका गुणगान करनेमें समर्थ नहीं हूँ। जिस प्रकार गङ्गाजलके द्वारा ही गङ्गापूजा होती है, मैं भी उसी प्रकार केवल श्रील महाराजजीके गुणोंके द्वारा ही श्रील महाराजजीका गुणगान करनेका प्रयास करुँगा। अप्राकृत चरित्रवाले श्रील महाराजजी सदैव आनन्दमय मुद्रामें रहते थे, उनका मुखकमल सदैव प्रसन्न रहता था। श्रील

महाराजजी कृष्णकथा कहनेमें परमदक्ष, अभिमान रहित, भजनमें प्रवीण तथा जड़ीय विषयोंके प्रति सम्पूर्ण रूपसे उदासीन थे। वे सदैव राधा–कृष्णकी दिव्य नित्यलीलाओंका मधुर वाणीसे कीर्त्तन करते थे। उनसे भेंट होनेपर वे प्रायः ही मुझसे पूछते थे कि मठमें सब कुशल तो है, किसीसे द्वेष तो नहीं होता, तो मैं श्रील महाराजजीसे कहता था कि आपकी अपार करुणासे किसीसे द्वेष नहीं होता।

श्रील प्रभुपादके विशुद्ध विचारोंकी व्याख्या करनेवाले

एकबार हमारे गुरुदेव विश्वविश्रुतवाग्मीप्रवर नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिहृदय वन गोस्वामी महाराजने

श्रीरूप गोस्वामीकी धारामें पूर्णता अभिषिक्त–

वैष्णवेर गुणगान करिले जीवेर त्राण।
शुनियाछि साधु–गुरु मुखे॥

('जय रे जय रे जय परमहंस महाशय' कीर्त्तनका एक पद)

अर्थात् वैष्णवोंका गुणगान करनेसे जीवोंका परित्राण होता है, ऐसा साधु–गुरुके मुखसे सुना है।

मैं रूपानुगधारामें स्नात मेरे शिक्षागुरुदेव श्रीरूप–प्रियात्मा श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी स्मृतिमें श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके कार्यालय, मथुरासे विरह–विशेषाङ्कके प्रकाशनके विषयमें सुनकर एवं उन विशेषाङ्कोंको देखकर बहुत आनन्दित हुआ। श्रील महाराजजीके अनुकम्पित कुछेक भक्तोंने मुझसे भी श्रील महाराजजीके चरणकमलोंमें पुष्पाञ्जली प्रदान करने हेतु अनुरोध किया। उन्हींके अनुरोधसे ही मैं इस कार्यमें प्रवृत्त हुआ हूँ। यद्यपि श्रील महाराजजीके अनन्त गुण हैं, तथापि मैं उनमेंसे दो–चार रत्नोंका वर्णन करके धन्यातिधन्य होऊँगा।

सिंह–शिशु

प्रायः चार–पाँच वर्ष पूर्व मुझे अपने परमगुरुदेव श्रीगौड़ीय–सङ्घके प्रतिष्ठाता नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराजके प्रिय विश्रम्भ–सेवक श्रीवनविहारी बाबाजी महाराजकी कृपासे लगभग चालीस वर्षके बाद श्रीनवद्वीप–धाम–परिक्रमाका सौभाग्य प्राप्त हुआ। हमने कोलेरडाङ्गामें नव स्थापित श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठसे आयोजित नवद्वीप

परमपूज्य महाराजजी

—श्रीपाद भक्तिबान्धव हृषिकेश महाराज

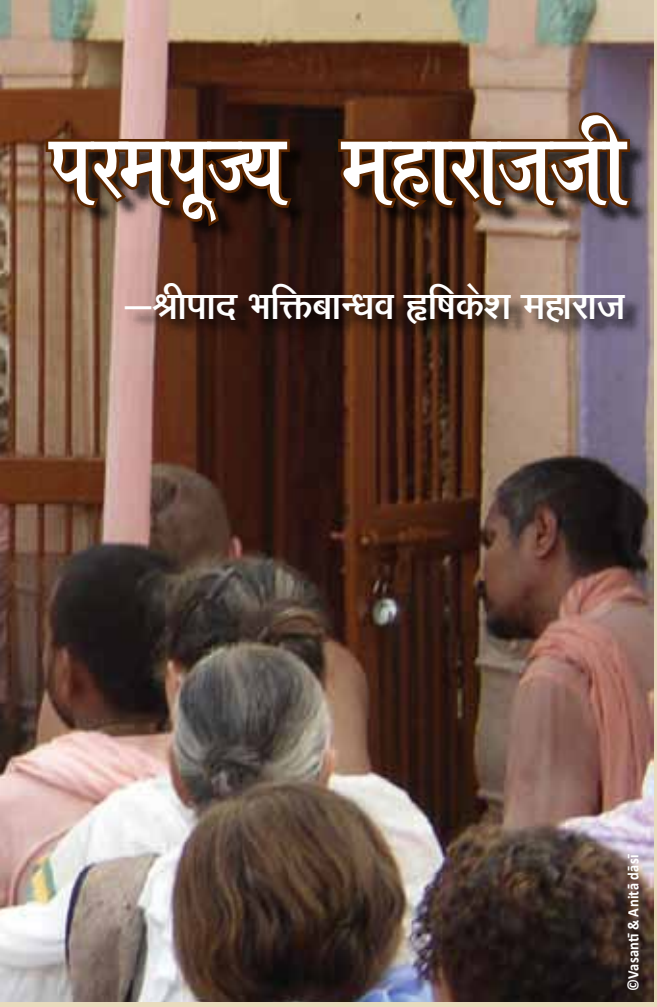

परिक्रमामें योगदान दिया। उन दिनों सन्ध्याके समय पूज्यपाद महाराजजीके गम्भीर भावों तथा उनकी शास्त्रीय–सिद्धान्तोंसे परिपूर्ण निर्भीक हरिकथाको सुनकर मैंने उन्हें केशरीवीर्य अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीके अपने परम गुरुदेव श्रील भक्तिसारङ्ग गोस्वामी महाराज द्वारा 'पाषाण्ड गजैक सिंह' की उपाधिसे विभूषित श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके 'सिंह–शिशु'के रूपमें अनुभव किया।

यथार्थ आचार्य

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीने मथुरामें स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें प्रायः आजीवन अवस्थानकर श्रीमन्महाप्रभुके द्वारा आचरित एवं प्रचारित शुद्ध प्रेम–भक्तिके आचार–प्रचार, शुद्ध भगवत्–भक्तिसे सम्बन्धित ग्रन्थों तथा प्रतिवाद–ग्रन्थ–स्वरूप 'प्रबन्ध–पञ्चकम्' आदिका प्रकाशन करके यथार्थ आचार्यत्वके आदर्शको स्थापित किया है।

निकुञ्जसेवामें सेवाधिकार प्रदानकारी

श्रील महाराजजीने श्रीब्रह्म–मध्व–गौड़ीय–सम्प्रदायके अन्तर्गत श्रीरूपानुग–विचारधाराका प्रचार आदि करनेके उद्देश्यसे पृथ्वीके विभिन्न स्थानोंपर प्रचारकेन्द्र और मठ आदि स्थापित किये हैं। श्रील महाराजजीने श्रीधाम वृन्दावन स्थित सेवाकुञ्जमें श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठकी स्थापनसे आश्रितजनोंको 'निकुञ्जसेवा' में सेवाधिकार प्रदान किया है।

यथार्थ गुरु–भ्राता

अस्मदीय श्रीगुरुपादपद्म अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिसुहृद् अकिञ्चन गोस्वामी महाराजजीके आदेशसे मैं 'सिद्धपीठ इमलीतला' के पुनर्संस्करणके

“जिनकर सुयश कहल ना जाय”[१]

—श्रीपाद राधामाधव दास

करबद्ध निवेदन

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी भक्तिवेदान्त नारायण महाराजके साथ इस दासका कम–से–कम तीस वर्षोंका अन्तरङ्ग सम्बन्ध, सामीप्य, पारमार्थिक विचार–विमर्शका भाव रहा है। इस भावनात्मक सम्बन्धको लेखनके स्तरपर बाहर निकाल करके उसका परिवेशन करना बड़ा ही दुष्कर कार्य है। श्रील नारायण महाराजजीके प्रति शब्दोंकी भाषामें बन्धा हुआ मेरा यह संस्मरण

१ जिनके सुयशका वर्णन नहीं किया जा सकता

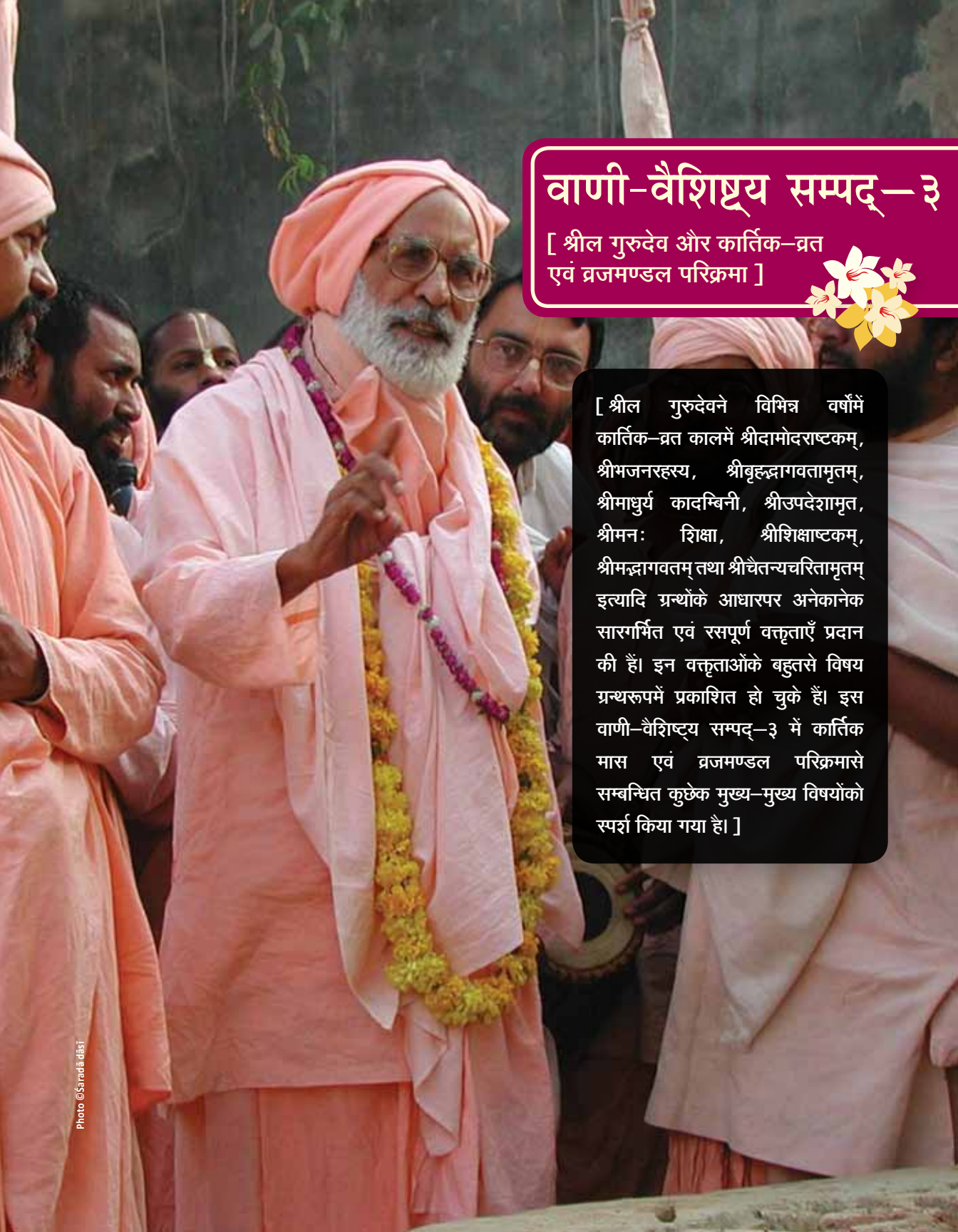

वाणी–वैशिष्ट्य सम्पद्–३

[श्रील गुरुदेव और कार्तिक–व्रत एवं व्रजमण्डल परिक्रमा]

[श्रील गुरुदेवने विभिन्न वर्षोंमें कार्तिक–व्रत कालमें श्रीदामोदराष्टकम्, श्रीभजनरहस्य, श्रीबृहद्भागवतामृतम्, श्रीमाधुर्य कादम्बिनी, श्रीउपदेशामृत, श्रीमनः शिक्षा, श्रीशिक्षाष्टकम्, श्रीमद्भागवतम् तथा श्रीचैतन्यचरितामृतम् इत्यादि ग्रन्थोंके आधारपर अनेकानेक सारगर्भित एवं रसपूर्ण वक्तृताएँ प्रदान की हैं। इन वक्तृताओंके बहुतसे विषय ग्रन्थरूपमें प्रकाशित हो चुके हैं। इस वाणी–वैशिष्ट्य सम्पद्–३ में कार्तिक मास एवं व्रजमण्डल परिक्रमासे सम्बन्धित कुछेक मुख्य–मुख्य विषयोंको स्पर्श किया गया है।]

Photo ©Śaradā dāsī

चातुर्मास्य–व्रतको पालन करना ही कर्त्तव्य

श्रावण, भाद्र, आश्विन और कार्तिक—इन चार मासोंको एक साथ चातुर्मास्य कहा जाता है। प्राचीन कालसे ही ऋषि–मुनि, भक्त इत्यादि प्रायः सभी चातुर्मास्यके समयमें एक ही स्थानपर रहकर भगवान्‌का भजन–कीर्त्तन करते हैं। श्रीमद्भागवतमें श्रीनारदजीने अपने पूर्वजन्मके प्रसङ्गमें ऋषियोंके द्वारा उनके ग्राममें रहकर चातुर्मास्य व्रतके पालनके विषयमें बताया है। श्रीचैतन्यचरितामृतमें श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा श्रीरङ्गमें श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामीके पिता श्रीवेङ्कट भट्टके घरपर रहकर आदरपूर्वक चातुर्मास्य–व्रतके पालनका आदर्श प्रस्तुत करनेका वर्णन किया है। श्रील सनातन गोस्वामीने स्वरचित श्रीहरिभक्तिविलासमें चातुर्मास्य–व्रतके पालनकी महिमाका विस्तृत रूपसे वर्णन किया है। सप्तम गोस्वामी श्रील भक्तिविनोद ठाकुरने चातुर्मास्य–व्रतकी महिमासे सम्बन्धित कुछेक प्रबन्ध भी लिखे हैं। मेरे परमाराध्य गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज चातुर्मास्यके आरम्भ होनेसे पूर्व ही अपने गुरुदेव श्रील प्रभुपादके चातुर्मास्यके चित्रपटको अर्थात् श्रील प्रभुपादके ऐसे चित्रपटको, जिसमें चातुर्मास्यके समय की उनकी बढ़ी हुई दाढी तथा केश होते थे, उसे मन्दिरमें रखनेका आदेश देते थे, जिससे कि हम सभी श्रील प्रभुपादके आदेशसे अनुप्राणित होकर उत्साह एवं दृढतापूर्वक चातुर्मास्य–व्रतका पालन करनेके लिये प्रस्तुत हो जायें।

अनेक व्यक्ति चातुर्मास्यके अन्तर्गत केवलमात्र कार्तिक–व्रतका ही पालन करते हैं, चातुर्मास्य–व्रतका पालन नहीं करते। इस विषयमें मेरे गुरुपादपद्म कहते थे कि यद्यपि चौंसठ प्रकारके भक्त्यांगोंमें चातुर्मास्यका वर्णन नहीं किया गया है, केवल ऊर्जा–व्रतका ही वर्णन मिलता है, तथापि हमें चातुर्मास्यके चारों मासोंमें ही व्रतका पालन करना चाहिए। जो चातुर्मास्य व्रतका पालन नहीं करते हैं, वे श्रीमन्महाप्रभुके अनुयायी नहीं कहे जा सकते, क्योंकि श्रीमन् महाप्रभुने अपने जीवनमें स्वयं इस चातुर्मास्य–व्रतका पालन किया था। इसलिए मैंने पूर्व–पूर्व ऋषि–मुनियों, स्वयं भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु एवं रूपानुगप्रवर श्रील भक्तिविनोद ठाकुर, श्रील प्रभुपाद, अपने गुरु महाराज एवं उनके गुरुभाईयों—सभीके द्वारा दिखलाये गये आदर्शका सदैव सम्मान एवं पालन करते हुए इन महाजनों द्वारा प्रदर्शित विधि–निषेध इत्यादिके आधारपर ही यथासम्भव चातुर्मास्य–व्रतका पालन किया है। इसीलिए देश–विदेशमें

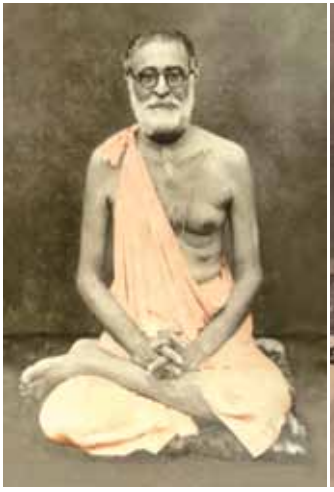

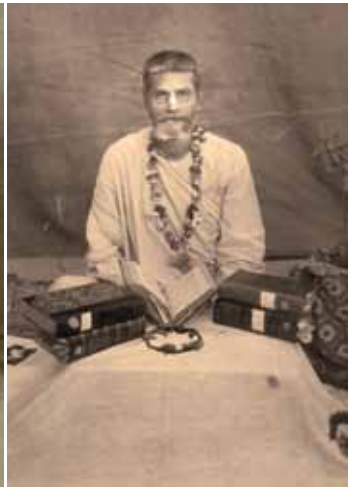

जो चातुर्मास्य व्रतका पालन नहीं करते हैं, वे श्रीमन्महाप्रभुके अनुयायी नहीं कहे जा सकते, क्योंकि श्रीमन् महाप्रभुने अपने जीवनमें स्वयं इस चातुर्मास्य–व्रतका पालन किया था।

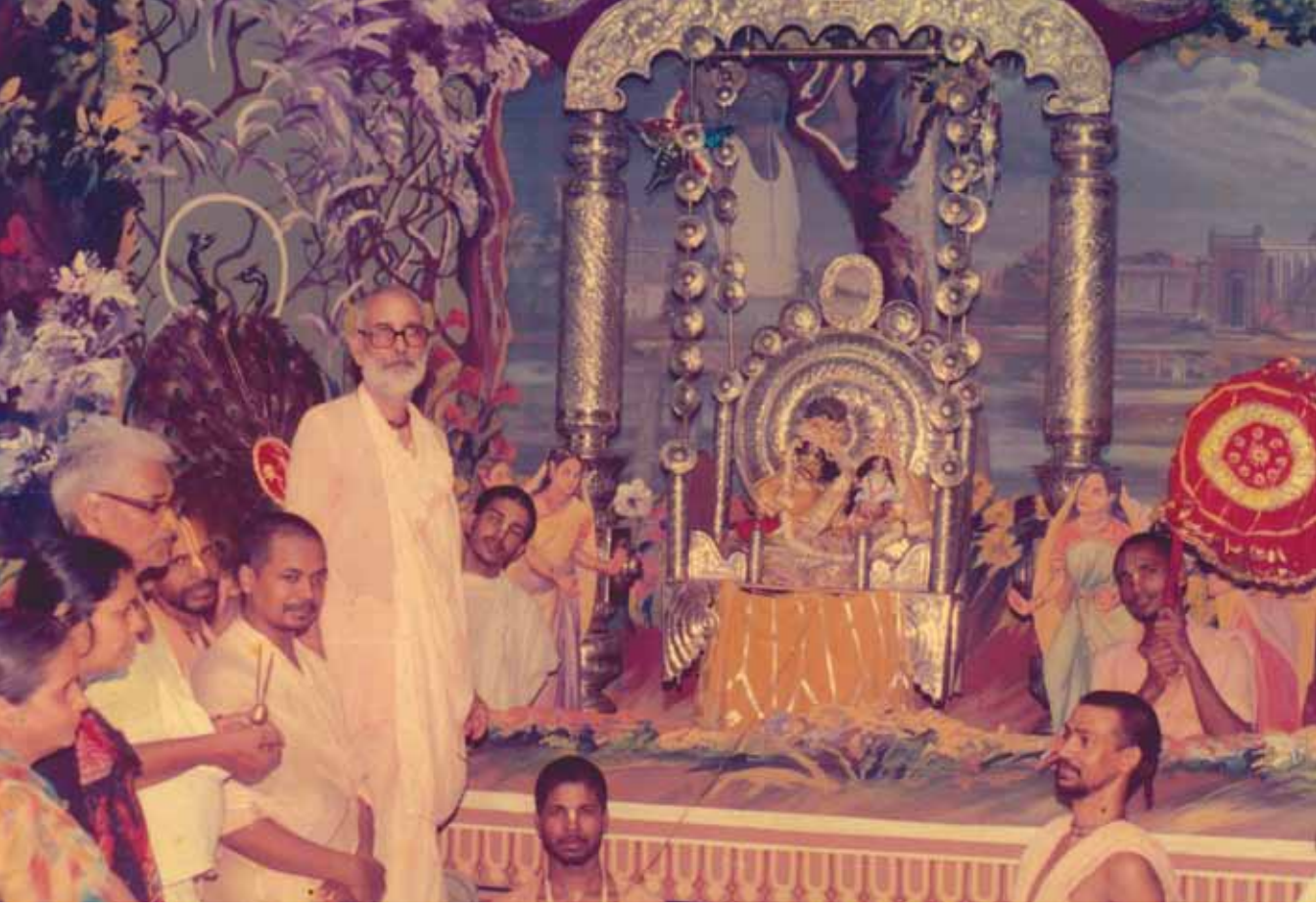

प्रचार कार्य हेतु अत्यधिक व्यस्त रहनेपर भी मैं चातुर्मास्यके आरम्भ होनेसे पहले ही भारतमें आ जाता हूँ तथा चातुर्मास्य–व्रतके पालनके बाद ही पुनः प्रचार–सेवाके लिए विदेश जाता हूँ। यद्यपि मेरी इच्छा रहने पर भी व्रजमें एक ही स्थान पर रहकर चातुर्मास्य–व्रतका पालन करना मेरे लिये सम्भव नहीं हो पाता, तब भी चातुर्मास्यके अन्तर्गत आनेवाले गुरु–पूर्णिमा, झूलन, जन्माष्टमी, राधाष्टमी तथा कार्तिक इत्यादि विशेष–विशेष व्रत–उत्सवोंको तो अवश्य ही व्रजमें ही रहकर पालन करता रहा हूँ। जो व्यक्ति श्रीचैतन्य महाप्रभु एवं पूर्व–पूर्व आचार्योंके सिद्धान्तोंका अनुगमन नहीं करते, उनके भजन–पथमें अनेक प्रकारकी बाधाएँ उत्पन्न होती हैं। अतएव चातुर्मास्य–व्रत प्रत्येक वैष्णवके लिये पालनीय है। सभीको विशेषतः ब्रह्मचारी, संन्यासियोंको तो चातुर्मास्य–व्रतका दृढतापूर्वक पालन करना चाहिए।

कार्तिक–चातुर्मास्यका अन्तिम मास

यदि कोई किसी कारणवशतः चातुर्मास्यके चारों मासोंमें व्रतका पालन नहीं कर पाता, तो अन्ततः उसे चातुर्मास्यके अन्तिम मास—कार्तिक मास (नियमसेवा मास) का पालन तो अवश्य ही करना चाहिए। विशेषतः हम गौड़ीय वैष्णवोंके लिए जो महाभाव स्वरूपा श्रीमती राधारानीकी कृपा प्राप्त करनेके अभिलाषी हैं, कार्तिक या ऊर्जा मासका नियमपूर्वक पालन एक अनिवार्य विधि है। क्योंकि, इस कार्तिक मासमें ऊर्जा व्रतका पालन करनेसे श्रीमती राधारानीकी विशेष कृपा प्राप्त होती है।

सम्पूर्णरूपसे एवं सब समयके लिए नहीं बाँध सके हैं। माता यशोदा श्रीकृष्णको एक दिनके लिए बाँध सकती हैं, किन्तु श्रीमती राधिकाजी तो नित्यकालके लिये ही उन्हें बाँध सकती हैं।

इसी कार्तिक–मासमें गोपियोंने गाँठोली ग्राममें श्रीमती राधिकाकी ओढ़नीको श्रीकृष्णकी पीली चादरसे बाँध दिया था, इसीलिए श्रीकृष्ण 'श्रीराधाजीके दामोदर' तथा यह मास 'दामोदर मास' कहलाता है।

कार्तिक–व्रतके समयका निर्णय

आश्विन मासके अन्तिम दिनोंमें विजया–दशमीके पश्चात् आनेवाली एकादशी, द्वादशी अथवा पूर्णिमाको कार्तिक व्रतका आरम्भ होता है तथा कार्तिक–मासके अन्तिम दिनोंमें उत्थान एकादशी अथवा उसके पश्चात् आनेवाली द्वादशी एवं पूर्णिमाको इसकी समाप्ति होती है। उत्थान एकादशीसे पूर्णिमा तकके अन्तिम पाँच दिन भीष्म पञ्चकके नामसे जाने जाते हैं। अर्थात् जो व्यक्ति किन्हीं कारणोंसे चातुमास्यके अन्तर्गत कार्तिक–व्रतका पालन नहीं कर पाये, उनके द्वारा अन्ततः इन अन्तिम पाँच दिनोंमें निष्ठापूर्वक व्रत–नियम पालन करनेसे परमार्थिक लाभकी प्राप्ति होगी।

कार्तिक–मासकी विशेषता

प्रेमके विषयमें श्रीमती राधिकाजी श्रीकृष्णकी भी गुरु हैं। कार्तिक मासमें यदि कोई विशेष रूपसे श्रीमती राधिकाकी पूजन, स्तवन आदि द्वारा आराधना करता है, तो श्रीकृष्ण उस व्यक्तिके वशीभूत हो जाते हैं। इस मासमें नियमपूर्वक वैष्णव–सेवा, स्तव–स्तुति, श्रवण–कीर्त्तन, धाम–परिक्रमा, तथा श्रीराधाकृपाकटाक्ष–स्तवराजके नियमित पाठ करने मात्रसे श्रीश्रीराधादामोदर प्रसन्न हो जाते हैं। कार्तिक मासकी एक अपूर्व विशेषता यह है कि इस मासमें श्रीकृष्णकी स्तुति करनेसे श्रीमती राधारानी सन्तुष्ट हो जाती हैं, तथा श्रीमती राधारानीकी स्तुति करनेसे श्रीकृष्ण सन्तुष्ट हो जाते हैं। जो इस मासमें श्रद्धापूर्वक यमुना–पूजन तथा यमुना स्नान आदि करते हैं, उन्हें यम महाराज अथवा उनके दूत कभी भी स्पर्श नहीं करते।

इस मासमें श्रीमती राधारानीकी आराधना करनेसे पृथकरूपसे श्रीकृष्णकी आराधना करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि श्रीकृष्ण ऐसे व्यक्तिके पीछे स्वयं ही धावित होते हैं—यही उनका स्वभाव है।

इस दामोदर–व्रतका पालन करनेसे भक्तोंके हृदयमें ऐसे प्रेमका प्रादुर्भाव होता है, जिससे परब्रह्म श्रीकृष्ण स्वयं ही बँध जाते हैं।

दीपदान आदि करनेसे श्रीश्रीराधाकृष्णयुगलकी कृपा प्राप्त होती हैं। इस मासमें श्रीदामोदराष्टक, श्रीनन्दनन्दनाष्टक

कार्तिक–व्रतके पालन हेतु स्थानका निर्णय

अस्मदीय गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोतरशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज कार्तिक–व्रतका पालन श्रीवृन्दावन, नवद्वीप, पुरी, द्वारका, अयोध्या, नैमिषारण्य, हरिद्वार इत्यादि धामों, तीर्थ–स्थलियोंमें रहकर करते थे।

कार्तिक–व्रतका पालन घरपर रहकर ही करना उचित नहीं है। शास्त्रोंमें किसी–न–किसी तीर्थ–स्थानमें जाकर साधुओंके संगमें इस व्रतको पालन करनेका निर्देश दिया गया है–

प्रदक्षिणञ्च यः कुर्यात् कार्त्तिके विष्णुसद्मनि।
विष्णोः पूजा कथा विष्णोर्वैष्णवानाञ्च दर्शनम्।
न गृहे कार्त्तिके कुर्याद्विशेषेण तु कार्त्तिकम्।
तीर्थे तु कार्त्तिकीं कुर्यात् सर्वयत्नेन भाविनी॥

(श्रीहरिभक्तिविलास १६/६९,३०,१८६)

[अर्थात् कार्तिक–मासमें विष्णुके मन्दिरकी परिक्रमा करनी चाहिए। इस मासमें विष्णुका पूजन, विष्णुकी कथाका श्रवण और वैष्णवोंका दर्शन अर्थात् सत्संग करना चाहिये। कार्तिक–मास अर्थात् ''कार्तिक–व्रत'' को अपने घरपर रहकर ही पालन नहीं करना चाहिये, अपितु परम आदरके साथ किसी तीर्थ–स्थानोंमें वास करते हुए इसका पालन करना चाहिए।]

बहुतसे लोगोंका कहना है कि क्या घरमें रहकर धर्म–कर्मका पालन नहीं किया जा सकता? इसके लिए तीर्थस्थानोंमें जानेकी आवश्यकता ही क्या है? शास्त्रोंने इसका उत्तर दिया है–यह सत्य है कि धर्म–कर्मका पालन सभी स्थानोंमें ही किया जा सकता है, किन्तु उन सभी स्थानोंमें सत्संगका होना उचित ही नहीं अपितु अनिवार्य है। सत्संगके अभावमें तीर्थ–यात्रा आदि ही जब व्यर्थ हो जाते हैं, तब फिर घरमें रहकर धर्म–कर्म आदि करनेकी निष्फलताका तो कहना ही क्या? अपनी चेष्टा या विद्याबुद्धिके द्वारा तत्त्व–वस्तु–भगवान् एवं भक्तिका सम्यक् ज्ञान नहीं हो सकता। साधु–संगमें ही भक्ति–वृत्ति उदित होती है। शुद्ध–भक्तोंके मुखसे भगवान्की वीर्यवती कथाओंका श्रवण करनेसे ही जीवोंका वास्तविक कल्याण होता है। धाममें साधुओंका सङ्ग अनायास ही प्राप्त हो जाता है। विषयोंमें फँसे हुए सांसारिक जीवोंको धाममें रहकर साधुसङ्ग करनेके सुयोग बहुत कम ही मिलते हैं, इसलिए शास्त्रोंमें अन्ततः वर्षमें एक मासके लिये साधुसंगके उद्देश्यसे धामवास करनेका निर्देश दिया गया है।

गुरुपादपद्मके आशीर्वादसे कनक–कामिनी–प्रतिष्ठा आदि मलसे मुक्त शुद्ध–नामाश्रित भक्तोंके आनुगत्यमें इस व्रतका पालन करना ही कर्तव्य है। मनमें सदैव यही विचार रखना चाहिए कि व्रतका पालन तो श्रील गुरुदेव एवं शुद्धभक्त ही कर रहे हैं। यदि इस व्रतका पालन करनेमें मैं इनकी लेशमात्र भी सेवा कर पाया, तो मेरा जीवन धन्य हो जायेगा। किसी–न–किसी दिन मेरी इस निष्कपट सेवा–वृत्तिको देखकर इनकी कृपा होनेपर मैं भी इस व्रतको सुष्ठुरूपसे पालन करके ऊर्जेश्वरी श्रीमती राधाजीको प्रसन्न करनेकी चेष्टा करूँगा। सभीको अपने–अपने अधिकारानुसार इस व्रतका पालन करनेकी यथेष्ट चेष्टा करनी चाहिए।

इस व्रतका उद्देश्य केवलमात्र संसारसे मुक्ति अथवा सांसारिक भोगोंकी प्राप्ति नहीं है। यह व्रत तो श्रीकृष्ण एवं उनके सर्वश्रेष्ठ भक्तोंकी कृपा प्राप्तिके लिए है। यत्नके साथ नियमपूर्वक पालन करनेसे समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

कार्तिक–व्रतके समय ही श्रीव्रजमण्डल–परिक्रमाके आयोजनका कारण

गौड़ीय–वैष्णवगण श्रीचैतन्य महाप्रभुके व्रजभ्रमणका अनुसरण करते हैं। इसके अनुसार कुछ भक्त आश्विन मासमें विजया दशमीके पश्चात् शरत् कालमें परिक्रमा आरम्भ करते हैं, क्योंकि श्रीचैतन्य चरितामृतके अनुसार श्रीमन्महाप्रभु श्रीनीलाचल धामसे व्रजमण्डलका दर्शन करनेके लिए लगभग इसी समय पधारे थे। कुछ गौड़ीय वैष्णवगण आश्विन मासकी शुक्ल–एकादशीसे कार्तिक–व्रत, नियम–सेवा आरम्भ करके उसी दिनसे ब्रजमण्डल परिक्रमा प्रारम्भ करते हैं, तथा कार्तिक–मासके शुक्ल पक्षकी देवोत्थान एकादशीको व्रत एवं परिक्रमाका समापन करते हैं। अधिकांश गौड़ीय–वैष्णव शारदीय–पूर्णिमाके दिनसे कार्तिक, नियम–सेवा या ऊर्जाव्रतका पालन एवं ब्रजमण्डल परिक्रमाका संकल्प करते हैं, तथा देवोत्थान एकादशीके पश्चात् कार्तिक हैमन्तिकी पूर्णिमाके दिन कार्तिक व्रत एवं ब्रजमण्डल परिक्रमाका समापन करते हैं।

निषेध—क्रोध नहीं करना, परिक्रमा पथमें वृक्ष, लता, गुल्म, गो आदिको नहीं छेड़ना, ब्राह्मण, वैष्णवादि तथा श्रीमूर्तियोंका अनादर नहीं करना, साबुन, तेल और खोर कार्य (मुण्डन आदि)का वर्जन करना, चींटी इत्यादि जीव हिंसासे बचना, परनिन्दा, परचर्चा और कलहसे सदा बचना—ये सब निषेध हैं।

ब्रह्मचर्यपूर्वक इस मासमें निर्दिष्ट नियमोंका पालन करना चाहिए। सत्य बोलना, निन्दा रहित होकर संख्यापूर्वक हरिनाम एवं अनुशीलन इत्यादिको चेष्टापूर्वक करना चाहिए।

कार्तिक मासमें उपस्थित होनेवाली विशेष-विशेष तिथियोंका विवरण

श्रीकृष्ण द्वारा व्रजमें की जानेवाली समस्त लीलाओंका एकमात्र कारण श्रीमती राधारानीको प्रसन्न करना है। कार्तिक मासकी अधिष्ठात्री देवी श्रीमती राधारानी हैं, इसलिए श्रीकृष्णने अपनी अनेकानेक लीलाएँ इसी मासमें ही की हैं। केवल इतना ही नहीं, अनेकानेक उन्नत एवं रसिक गौड़ीय-वैष्णवाचार्योंका आविर्भाव या तिरोभाव भी इसी परम पवित्र कार्तिक मासमें ही हुआ है।

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी तिरोभाव-तिथि एवं शरद-पूर्णिमा

कार्तिक मासकी शरद पूर्णिमाके दिन मेरे गुरु महाराजकी अत्यन्त शुभ विरह-तिथि है। शरद-ऋतुमें पूर्णिमाकी सन्ध्याको जब श्रीकृष्ण रासका उपक्रम कर रहे थे, तभी मेरे गुरु महाराज श्रीकृष्णकी अप्रकट लीलामें प्रविष्ट हो गये। श्रीकृष्णकी शारदीय रासलीलामें प्रवेश करनेकी ही उनकी अभिलाषा थी। वे उसी समय अप्रकट हुए थे जब प्रदोष कालमें चंद्र उदय हो रहा था, जैसा कि रासलीलाके प्रारम्भमें श्रीमद्भागवतम्में वर्णन किया गया है।

रसिक एवं भावुक भागवत

परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव नित्यलीला प्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज भक्तिविरोधी केवलाद्वैतवादियों, स्मार्तों, जाति-गोस्वामियों, जाति-वैष्णवों एवं प्राकृत सहजिया अपसम्प्रदायके लोगोंके लिए परम गम्भीर एवं वज्रकी अपेक्षा भी अधिक कठोर थे। तथा परम रसिक, महाभावुक गुरुसेवानिष्ठ सतीर्थों और निष्कपट शिष्योंके प्रति पुष्पसे भी अधिक मृदुस्वभाव सम्पन्न थे।

एक बार जब श्रील गुरु महाराजने सहजिया लोगोंके विरुद्ध कुछ कठोर शब्दोंका व्यवहार किया, तो जज़ने उन्हें परामर्श देते हुए कहा कि आप मधुर शब्दोंका प्रयोग करें। इसके उत्तरमें श्रील गुरुदेवने व्रजकी अपेक्षा अधिक कठोर शब्दोंमें कहा-"मैं इस संसारमें मधुर शब्दोंका प्रयोग करनेके लिए नहीं आया हूँ। मैं संन्यासी हूँ। हम संन्यासियोंको ही कठोर भाषा बोलनेका अधिकार है। हमारे अतिरिक्त और कोई भी ऐसा नहीं कर सकता है। यदि हम ही कटु किन्तु मङ्गलकारी शब्दोंका प्रयोग नहीं करेंगे, तो फिर कौन करेगा?" श्रील गुरुदेवकी बात सुनकर जज निरुत्तर हो गया।

श्रील गुरु महाराज द्वारा रचित श्रीगोविन्द-लीलामृत तथा श्रीकृष्ण भावनामृत आदि ग्रन्थोंके सार-स्वरूप 'मङ्गल श्रीगुरु-गौर' मङ्गल-आरति एवं 'राधाचिन्ता-निवेशेन' श्रीराधाविनोदविहारी -तत्त्वाष्टकम् उनके परम रसिक होनेका स्वतः सिद्ध प्रमाण है।

एक समय श्रील गुरुपादपद्म कार्तिक-मासमें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें पधारे थे। एक दिन वे अपनी भजनकुटीमें बैठे हुए भावपूर्वक हरिनाम कर रहे थे। मैं भी उनकी भजनकुटीमें एक ओर बैठकर श्रीगोपालचम्पूमें-से श्रीदामोदर-बन्धनका प्रसंग पढ़ रहा था। मैं उसे पढ़कर

Photo ©Śaradā dāsi

छुटकारा प्राप्त नहीं होता, उन अनर्थोंको विनष्ट करने और श्रीभगवान्‌को सुप्रसन्न करनेके विषयमें गुरुकी प्रसन्नता ही मूल कारण है। इसलिए भगवद्भक्तिके साधन और उसका फल अर्थात् समस्त अनर्थोंकी निवृत्तिपूर्वक भगवत्–प्रेम और भगवान्‌की सेवाकी प्राप्तिके विषयमें गुरुकी प्रसन्नता ही मूल कारण है।" इन सब वचनोंमें विश्वास और निष्ठा स्थापनपूर्वक श्रीगुरुदेवकी सेवा करनी चाहिए।

यद्यपि मेरे गुरुदेवमें असंख्य अप्राकृत गुणसमूह विद्यमान थे, तब भी उनका अतिअद्भुत और सर्वश्रेष्ठ गुण था—उनकी गुरु निष्ठा। उनमें अपने गुरुदेव श्रील प्रभुपादके प्रति अगाध निष्ठा, दृढ़ श्रद्धा एवं भक्ति थी। गुरु–निष्ठा हरि–भजनका मेरु–दण्ड (रीढ़) है। गुरु–निष्ठाके बिना कोई भी हरिभजन नहीं कर सकता। मेरे गुरुपादपद्म अपने गुरुदेव श्रील प्रभुपादके लिए तत्क्षण प्राण–त्याग करनेके लिए भी सर्वदा तत्पर रहते थे। अपने गुरुके लिए अपने जीवनको भी दाँवपर लगा देनेवाले सत्–शिष्योंके उदाहरण वास्तवमें अत्यन्त दुर्लभ हैं।

जिस प्रकार श्रील रूप गोस्वामीने श्रीमन्महाप्रभुके मनोऽभीष्टको इस जगत्‌में स्थापन किया था, उसी प्रकार मेरे गुरु महाराजने भी श्रील प्रभुपादजीके मनोऽभीष्टको सम्पूर्णरूपसे स्थापन किया था।

शारदीय–रास

श्रीकृष्णकी लीलाओंकी चूड़ामणि अर्थात् रासलीला भी इसी शरद पूर्णिमाको ही आरम्भ हुई थी। श्रीकृष्णकी समस्त लीलाओंमें यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं श्रेष्ठ लीला है। कार्तिक–मासके प्रथम दिनमें ही श्रीकृष्णने वृन्दावनके वंशीवटके तटमें अगणित गोपियोंके साथ शारदीय रास आरम्भ किया था।

जैसा कि श्रीमद्भागवतम्‌में कहा गया है—

भगवानपि ता रात्रिः
शारदोत्फुल्लमल्लिकाः।
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे
योगमायामुपाश्रितः॥

(श्रीमद्भा॰ १०/२९/१)

अर्थात् श्रीशुकदेव गोस्वामीने कहा—षड़ैश्वर्यसे परिपूर्ण होनेपर भी भगवान् श्रीकृष्णने (वस्त्रहरणके समयमें गोपियोंको जिन रात्रियोंका सङ्केत किया था, वे सभी रात्रियाँ एकत्रित होकर जिस एक ही दिव्य रात्रिके रूपमें सुशोभित हो रही थीं—) उस शारदीय रात्रि और विकसित मल्लिका पुष्पोंकी अपूर्व शोभाको देखकर अपनी प्यारी गोपियोंकी इच्छाको पूर्ण करनेके लिए अपनी शक्ति योगमायाका आश्रयकर रसमयी रासक्रीड़ा करनेकी इच्छा की।

लोक–मर्यादाका उल्लङ्घनकर मेरा भजन किया है। मैं देवताओं जैसी लम्बी आयु प्राप्त करके भी तुम्हारे इस प्रेम, त्याग और सेवाका बिन्दुमात्र भी बदला चुकानेमें असमर्थ हूँ। तुम अपने सौम्य–स्वभावसे ही मुझे उऋण कर सकती हो, किन्तु मैं तो तुम्हारे प्रेमका सदा ऋणी ही हूँ और रहूँगा।

श्रीराधाकुण्ड और श्याम–कुण्डका आविर्भाव एवं स्वरूपतः सभी तीर्थोंका व्रजमें ही निवास

इसी कार्तिक–मासकी कृष्णाष्टमीके दिन श्रीकृष्णने अरिष्टासुरका वध किया था, जिसे उपलक्ष्य करके इसी तिथिकी अर्धरात्रिके समय श्रीराधाकुण्ड और श्रीश्यामकुण्ड इस जगत्में आविर्भूत हुए थे। तभीसे यह तिथि बहुलाष्टमीके नामसे प्रसिद्ध है।

श्रीकृष्ण द्वारा अरिष्टासुरके वधके उपरान्त रात्रिमें श्रीमती राधिकाने श्रीकृष्णसे कहा—"आज तुमने एक वृष (साँढ़) की हत्या की है, जिससे तुम्हें गोहत्याका पाप लगा है, अतः मेरे पवित्र अङ्गोंका स्पर्श मत करो।" किन्तु श्रीकृष्णने उत्तर दिया—"प्रियतमे! मैंने एक वृषका वेश धारण करनेवाले असुरका वध किया है। अतः मुझे पाप कैसे स्पर्श कर सकता है?" श्रीराधाजीने कहा—"जैसा भी हो, तुमने वृषके रूपमें ही उसे मारा है। अतः गोहत्याका पाप अवश्य ही तुम्हें स्पर्श कर रहा है।" प्रायश्चित्तका उपाय पूछनेपर श्रीराधाजीने भूमण्डलके समस्त तीर्थोंमें स्नानको ही प्रायश्चित्त बतलाया। ऐसा सुनकर श्रीकृष्णने अपनी एड़ीकी चोटसे एक विशाल कुण्डका निर्माण कर उसमें भूमण्डलके समस्त तीर्थोंका आह्वान किया। साथ–ही–साथ

असंख्य तीर्थ अपना–अपना रूप धारणकर वहाँ अपस्थित हुए। कृष्णने उन्हें जलरूपसे उस कुण्डमें प्रवेश करनेको कहा। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण उस कुण्डमें स्नानकर जब श्रीमतीजो को पुनः स्पर्श करनेके लिये अग्रसर हुए, तब श्रीमती राधिकाने कहा—"हम कैसे विश्वास करें कि इस कुण्डमें स्नान करनेमात्रसे भूमण्डलके समस्त तीर्थोंमें तुमने स्नान कर लिया है।" ऐसा सुनकर श्रीकृष्णने सभी तीर्थोंके अधिष्ठात्री देवताओंको प्रत्यक्षरूपसे व्रजगापियोंके समक्ष उपस्थित होकर प्रमाण प्रस्तुत करेनेके लिये कहा। श्रीकृष्णकी आज्ञासे सभी तीर्थोंके अधिष्ठात्री देवताओंने व्रजरमणियोंके समक्ष उपस्थित होकर कहा—"हे देवियो! हम दूरमें नहीं, बल्कि यहीं पर निवास करते हैं। यह श्रीव्रजमण्डल सर्वतीर्थमय है। व्रजकी सेवा करनेके लिये ही हम सभी यहाँ पर वास करते हैं। यद्यपि हमारे स्वरूपका प्रकाश अन्य–अन्य स्थानोंपर भी है, तथापि हम स्वयं नित्य इसी स्थानपर निवास करते हैं।" इस प्रकार व्रजरमणियोंको कृष्णकी बातपर सम्पूर्ण विश्वास हो गया।

इस प्रसङ्गसे हमें यह ज्ञात होता है कि उस बहुलाष्टमीके दिन ही श्रीकृष्णकी इच्छासे यह प्रमाणित हुआ था कि सभी तीर्थस्थल अपने वास्तविक स्वरूपमें व्रजमें ही वास करते हैं तथा जगत्वासियोंके मङ्गलके उद्देश्यसे ही अन्यान्य स्थानोंपर अपने प्रकाशके रूपमें विराजमान हैं।

प्रपूज्यचरण श्रीश्रीमद्भक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराजजीकी आविर्भाव–तिथि

मेरे परमाराध्य शिक्षा गुरुदेव प्रपूज्यचरण श्रीमद्भक्तिरक्षक श्रीधर गोस्वामी महाराज कार्तिक मासकी कृष्ण नवमीको उपलक्ष्य करके इस जगत्में आविर्भूत हुए थे।

मैंने प्रपूज्यचरण श्रील श्रीधर महाराजजीका सर्वप्रथम दर्शन १९४६ ई० में किया था। प्रपूज्यचरण श्रील श्रीधर महाराजजी हमारे गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीकी भाँति एक श्रेष्ठ दार्शनिक थे।

प्रतिवर्ष मैं अपने गुरु महाराजजीके साथ प्रपूज्यचरण श्रील श्रीधर महाराजजीके दर्शनोंके लिए नवद्वीप स्थित उनके मठमें जाता था और मैंने बहुत बार प्रत्यक्ष देखा कि इन दोनों गुरु भाईयोंका परस्परमें कितना स्नेह था। दोनों ही परस्परको आदर–सम्मान देते थे। भले ही कोई भक्त वृद्ध हो अथवा युवक, यदि वे देखते कि यह भक्त निष्कपट हैं, तो वे उन्हें यथोचित सम्मान देते थे। इन दोनों गुरुभाईयोंके इस आदर्शको देखकर मैंने भी यथासम्भव ऐसे आदर्शको अपने जीवनमें सदैव पालन करनेका प्रयास किया है।

श्रील भक्तिरक्षक श्रीधर महाराजजी द्वारा रचित 'सुजनार्बुदराधितपादयुगम्, युगधर्मधुरन्धरपात्रवरम्' नामक 'श्रीप्रभुपादपद्म स्तवकः' अनेक अलङ्कारोंसे विभूषित और अत्यधिक सुन्दर है। इसके अतिरिक्त भी उन्होंने अनेक संस्कृतके कीर्त्तन तथा स्तवोंकी रचना की हैं।

उनके द्वारा रचित 'प्रेमधामदेव स्तोत्रम्' श्रीचैतन्य महाप्रभकी प्रायः सभी लीलाओंको अपनेमें समेटे हुए है। वह एक अद्भुत और चमत्कार पूर्ण रचना है, जिसकी कोई तुलना नहीं है। केवल हमारे षड् गोस्वामी, श्रील विश्वनाथ चक्रवर्तीपाद जैसे परम रसिक भक्त ही इस प्रकारकी रचना कर सकते हैं।

प्रपूज्यचरण श्रील श्रीधर महाराजजीकी श्रील गुरु महाराज तथा श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजीके साथ परम मित्रता थी। प्रपूज्यचरण श्रील श्रीधर महाराज कितने श्रेष्ठ होंगे कि श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजी जैसे विश्व प्रचारक भी उन्हें अपने शिक्षा गुरुके रूपमें स्वीकार करके गर्वका अनुभव करते थे।

दीपावली

इसी कार्तिक–मासकी अमावस्या तिथिको सम्पूर्ण विश्वमें दीपावलीका उत्सव अत्यधिक धूमधामसे मनाया जाता है।

भगवान् वामनदेवने जब बलि महाराजसे तीन पग भूमिके छलसे उनका सबकुछ हरण कर लिया, तब ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उन्होंने बलि महाराजके साथ बहुत बड़ा छल किया है, किन्तु वास्तवमें वह छल नहीं, बल्कि उनकी बलि महाराजके प्रति परम करुणा ही थी। जब श्रीवामनदेवने बलि महाराजसे सन्तुष्ट होकर उन्हें वर माँगनेके लिये कहा तब श्रीबलि महाराजने यह वर माँगा—"आप सदैव मेरे घरमें ही वास करें।" श्रीवामनदेवने बलि महाराजकी इच्छाको पूर्ण करते हुए उनके घरमें निवास करना स्वीकार कर लिया। श्रीवामनदेवकी स्वीकृतिसे परमानन्दित होकर श्रीबलि महाराजने अपने सगे–सम्बन्धियोंके साथ मिलकर दीप–माला तथा आतिशबाजी आदिके द्वारा दीपावली मनायी थी। स्कन्ध–पुराणके आधारपर यही प्रथम दीपावली है तथा यह घटना कार्तिक अमावस्याके दिन ही हुई थी।

जब भगवान् श्रीरामचन्द्र रावणका संहार करके अयोध्या लौटे थे तब अयोध्या नगरीको नयी दुल्हनकी भाँति सजाकर वहाँपर भी दीपावली मनायी गयी थी, किन्तु वह दीपावली चैत्र मास[१] में मनायी गयी थी।

स्वयं श्रीकृष्णने माता यशोदा, श्रीनन्द बाबा तथा अन्यान्य सभी व्रजवसियोंके साथ गोवर्धनके मानसी–गङ्गाके तटपर आकर दीपावलीका उत्सव मनाया था। इसी कारण हम भी सभी भक्तोंके साथ मानसी गङ्गाके तटोंपर दीपमाला प्रदान करके इस उत्सवको मनाते हैं।

१ शास्त्र प्रमाण और श्रील गुरुदेवके वचनरूपी प्रमाणके अनुसार भगवान् श्रीरामचन्द्रने विजयादशमीके दिन लङ्काकी ओर प्रस्थान किया और चैत्र मासकी नवमी तिथि अर्थात् उनके जन्मदिनपर ही अयोध्यामें चक्रवर्तीके रूपमें वे अभिषिक्त हुए थे। इसीलिए रावण वध और लङ्कासे अयोध्या लौटना चैत्र मासमें ही हुआ था।

महाभारत युद्धके उपरान्त जब श्रीकृष्ण द्वारका लौटकर गये थे, तब वहाँ पर भी उनके स्वागतमें दीपावलीका उत्सव मनाया गया था।

दीपावलीका अर्थ है प्रकाश। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' अर्थात् अन्धकारसे प्रकाशकी ओर चलो। श्रीकृष्णका भजन करनेपर ही हम अन्धकारसे निकलकर प्रकाशकी ओर जा सकते हैं। इस दिन हम गिरिराज गोवर्धनसे यही प्रार्थना करते हैं कि वे हमें अन्धकारसे निकलकर प्रकाशमें प्रवेश करनेकी शक्ति प्रदान करें।

दीपावलीका एक अर्थ आनन्द भी है तथा वह अप्राकृत आनन्द केवल करताल और मृदङ्गके माध्यमसे किये जानेवाले कीर्त्तनसे ही प्राप्त हो सकता है, क्योंकि कीर्त्तनकी ध्वनिके श्रवणसे माया तत्क्षणात् भाग जाती है तथा अनायास ही आनन्द ही आनन्द आकर उपस्थित हो जाता है। श्रीचैतन्य महाप्रभुके अनुगत होनेके कारण हम प्रत्येक उत्सवका ही सङ्कीर्त्तनके माध्यमसे पालन करके स्वयंको कृतकृतार्थ मानते हैं।

दाम-बन्धन एवं अन्नकूट-महोत्सव

कार्तिक-मासकी शुक्ल प्रतिपदाके दिन मैया यशोदाने कृष्णको ऊँखलसे बाँधा था। जिन परब्रह्मको आज तक कोई बाँध नहीं सका, उन परब्रह्म श्रीकृष्णको माँ यशोदाने इसी मासमें प्रेमकी रज्जूसे बाँधा था।

इसी मासमें गाँठोली नामक ग्राममें सखियोंने नटखट श्रीकृष्णको श्रीराधाजीके साथ बाँध दिया था, इसलिए उन्हें दामोदर कहते हैं।

श्रीकृष्ण सामान्य रस्सीके द्वारा नहीं बाँधे गये, किन्तु प्रेमके द्वारा अर्थात् शुद्ध-वात्सल्य प्रेमके द्वारा बँधे गये थे। श्रीकृष्ण अनादि हैं अर्थात् उनका कोई आदि नहीं है। वे अनन्त हैं अर्थात् उनका कोई अन्त नहीं है। परब्रह्म, अनन्त, अनादि, असीम, भगवान् होनेपर भी श्रीकृष्णको प्रेम द्वारा बाँधा और वशीभूत किया जा सकता है।

यद्यपि इस दिन श्रीकृष्ण स्वयं ऊँखलसे बँधे हुए थे, किन्तु ऐसी अवस्थामें भी उन्होंने अपने भक्त नारदजीके द्वारा शापित तथा उन्हींके वचनोंकी सत्यताको प्रतिपादित करकेके उद्देश्यसे यमलार्जुन नामक वृक्षका रूप धारण करनेवाले नलकूबर और मणिग्रीवको मुक्ति अर्थात् प्रेमभक्ति प्रदान की थी। श्रीकृष्णने केवल उनका उद्धार ही नहीं, बल्कि उन दोनोंको अपने गोलोक धाममें स्थित व्रजराजकी सभामें मधुकण्ठ और स्निग्धकण्ठ नामक गायकका नित्यस्वरूप भी प्रदान किया था।

श्रीकृष्ण द्वारा प्रदर्शित आदर्श

अमावस्याके बाद आनेवाली प्रतिपदाके दिन श्रीकृष्णने समस्त व्रजवासियों सहित प्रातःकाल सर्वप्रथम श्रीगुरु, फिर गाय, ब्राह्मण, वैष्णवकी क्रमशः पूजा-सम्मान करनेके बाद ही समस्त भोग सामग्रियोंको श्रीगिरिराजके लिए समर्पण पूर्वक अन्नकूट महोत्सवका अनुष्ठान किया था। इसीलिए अन्नकूट मात्रका अनुष्ठान करनेसे नहीं, बल्कि श्रीकृष्णके द्वारा प्रदर्शित आदर्शका

पुंखानुपुंख पालन करनेसे ही श्रीगिरिराज गोवर्धन प्रसन्न होते हैं।

श्रीकृष्ण द्वारा गिरिराजजीकी परिक्रमाका प्रवर्त्तन

अन्नकूट–महोत्सवके समय व्रजवासियोंके द्वारा समस्त भोग श्रीगिरिराज गोवर्धनको समर्पित किये गये। गिरिराजजीको सन्तुष्ट करनेके उपरान्त श्रीकृष्णने समस्त व्रजवासियोंके साथ गिरिराज गोवर्धनकी परिक्रमा लगायी। इस प्रकार गिरिरजजीकी परिक्रमाका भी शुभारम्भ स्वयं श्रीकृष्ण द्वारा इसी तिथिको ही किया गया था। अत्यन्त सौभाग्यशाली व्यक्ति आज तक भी गुरु–वैष्णवोंके आनुगत्यमें श्रीकृष्ण द्वारा प्रदर्शित इस आदर्शका पालन करते हैं। हमलोग लाखों–लाखों ज्ञानियों, कर्मियों इत्यादिकी भाँति श्रीगिरिराज गोवर्धनकी परिक्रमा नहीं करते, बल्कि हम गोपियों द्वारा कथित 'हरिदासवर्य अर्थात् हरिके दासोंमें श्रेष्ठ'–गिरिराज गोवर्धनरूपी साधु–सङ्गकी प्राप्तिकी लालसासे कृष्ण–सेवाकी वासनाका Injection लगवानेके लिये ही परिक्रमा करते हैं। यही हमारे द्वारा की जानेवाली गिरिराज परिक्रमाका वास्तविक उद्देश्य है।

श्रीकृष्ण द्वारा शुक्ला तृतीयासे नवमी तक गिरिराजको धारण करना

इन्द्रने जब देखा कि व्रजवासियोंने न तो उन्हें कोई भोग निवेदन किया और न ही कोई सम्मान प्रदर्शित किया, तब वह व्रजवासियोंके प्रति क्रोधित हो गया तथा उसने मूसलाधार वर्षा करनेवाले मेघोंको आदेश दिया कि जाकर सम्पूर्ण व्रजको जलमग्न कर दो। उसके आदेशसे शुक्ल तृतीयाके दिनसे आरम्भ करके शुक्ल नवमी तिथि तक उन्होंने व्रजमण्डलमें सर्वत्र मूसलाधार वर्षा की। उस समय श्रीकृष्णने समस्त व्रजवासियोंकी रक्षा हेतु, इन्द्रके गर्वका दमन करने तथा समस्त व्रजवासियोंको अपने निकट–सङ्गका सुख प्रदान करने, विशेषतः गिरिराज गोवर्धनको अपना स्पर्श सुख प्रदान करनेके उद्देश्यसे तृतीयासे नवमी तक अर्थात् सात दिन तक श्रीगिरिराज गोवर्धनको धारण

यम-द्वितीया

कार्तिक-मासकी शुक्ल द्वितीयाको यम-द्वितीया भी कहते हैं। इसी दिन यमुनाजीने अपने भाई यमराजजीको प्रीतिपूर्वक भोजन बनाकर खिलाया था। जो भी व्यक्ति इस दिन प्रीतिपूर्वक अपनी बहनके साथ यमुनामें स्नान करता है तथा उसके हाथका बना भोजन प्रीतिपूर्वक ग्रहण करता है, यमुनाके भैया यमराज कभी भी उसे स्पर्श नहीं करते। बल्कि वे आशीर्वाद स्वरूप उनके मनकी कामनाकी पूर्ति कर देते हैं।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजकी तिरोभाव-तिथि

कार्तिक मासकी जिस शुक्ला तृतीया तिथिमें दो वर्ष पूर्व पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजजीने नित्यलीलामें प्रवेश किया था, उसी तिथिमें प्रपूज्यचरण भक्तिवेदान्त वामन महाराजने भी अर्धरात्रिमें श्रीकृष्णकी नैश-लीलामें प्रवेश किया है।

प्रपूज्यचरण वामन महाराज मेरे गुरुदेव श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीके श्रेष्ठ सेवक थे। उन्होंने अपने बाल्यकालसे ही श्रील गुरुदेवकी विभिन्न प्रकारकी सेवाएँ की थीं। जब वे प्रायः दस वर्षके थे, तभी उनकी माँ उन्हें हमारे श्रीगुरुदेवके चरणोंमें समर्पित कर गयी थी और तभीसे ही प्रपूज्यचरण वामन महाराज हमारे गुरुदेवको ही अपनी माँ, पिता, गुरु और अपना सर्वस्व समझते थे।

पूज्यपाद वामन महाराज श्रील प्रभुपादके समयमें मठमें आये थे और श्रील प्रभुपादने उन्हें हरिनाम प्रदान किया था, किन्तु वे सब समय हमारे गुरुदेवको ही गुरु मानते थे, क्योंकि उन्होंने ही उनका पालन-पोषण किया था तथा उन्हें अपना आश्रय प्रदान किया था।

जब मैं अपने गृहस्थ आश्रमको त्यागकर श्रीनवद्वीप धाम रेलवे-स्टेशनपर पहुँचा, तब अर्ध-रात्रिका समय था। मैंने किसीको भी अपने नवद्वीप आनेकी सूचना नहीं दी थी। किन्तु वहाँपर सज्जनसेवक ब्रह्मचारी[२] लालटेन हाथमें लेकर एक अन्य भक्तके साथ मुझे ढूँढ़ रहे थे। वे मेरे पास आये और मुझसे पूछा—क्या आप तिवारीजी हैं? मैंने

[२] श्रील वामन गोस्वामी महाराजके ब्रह्मचारी अवस्थाका नाम

उत्तर दिया, हाँ। उन्होंने कहा कि मेरे साथ चलिए! श्रील गुरुदेवने आपको मठ ले आनेके लिये ही मुझे यहाँपर भेजा है। मैंने आश्र्यचकित होते हुए उनसे पूछा कि आपको कैसे पता चला कि मैं आ रहा हूँ, मैंने तो आनेका कोई संदेश भी नहीं भेजा था। प्रपूज्यचरण वामन महाराजजीने उत्तर दिया कि मुझे इस विषयमें कोई जानकारी नहीं है, मुझे तो श्रील गुरु महाराजजीने यहाँ भेजा है।

अपनी पूजा–प्रतिष्ठामें पूज्यपाद वामन महाराजकी लेशमात्र भी रुचि नहीं थी। वे न तो कभी अपनी प्रशंसा करते थे और न ही सुनते थे। अपने द्वारा सम्पन्न की गयी सेवाओंका कभी भी अपने मुखसे वर्णन नहीं करते थे। मैं उनसे बहुत छोटा तथा उनके शिक्षा–शिष्यके समान हूँ, तब भी वे मुझे बहुत आदर–सम्मान देते थे।

हरिकथाके समय पूज्यपाद वामन महाराजजी मुझे पहले बोलनेके लिये कहा करते थे। मैं बहुत बार उनसे अनुरोध करता था कि आप पहले वक्तृता दें। किन्तु वे उत्तर देते कि नहीं, आप ही पहले वक्तृता देंगे। इस प्रकार मैं प्रायः सब समय उनसे पराजित होता और मुझे ही पहले वक्तृता देनी पड़ती थी। वास्तवमें वे वैष्णव–आचरणके आदर्श स्वरूप थे।

पूज्यपाद वामन महाराज श्रील गुरुदेवके दाहिने हस्त स्वरूप थे। पूज्यपाद वामन महाराज, पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज और मैं–हम तीनों प्रारम्भसे ही मठके सम्पूर्ण सेवाभारका दायित्व अपने कंधोंपर लेते थे। जो कुछ भी करना होता था, हम तीनों एक साथ मिलकर करते थे।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम गोस्वामी महाराजजीकी तिरोभाव–तिथि

जब मैं सर्वप्रथम मठमें आया था, तबसे ही पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजजी मेरे प्रति बन्धुवत् स्नेह प्रदर्शित किया करते थे। हम प्रायः एक साथ ही रहते थे तथा सिद्धान्तोंकी चर्चा करते–करते कभी–कभी झगडते थे। मेरे गुरु महाराजने मुझे उनके हाथोंमें सौंप दिया था और इसी कारण हमारे घनिष्ट सम्बन्ध थे। पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजने ही मुझे कीर्त्तन करना, प्रचार करना और भिक्षा करना सिखलाया था। कभी–कभी वे मुझे अत्यन्त प्रेमपूर्वक डाँटते भी थे। श्रील गुरु महाराजने मुझे कभी भी नहीं डाँटा था, किन्तु पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज मुझे प्रेमसे डाँटा करते थे।

यद्यपि श्रील गुरु महाराजजीने नित्यलीलामें प्रविष्ट होनेके बाद भी आन्तरिक रूपसे हमारी देखभाल और हमें उत्साह प्रदान किया, तथापि बाहरी रूपसे पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजजीने मेरे गुरु महाराजजीका स्थान प्राप्त किया अर्थात् वे मुझे प्रत्येक सेवाकार्य करनेमें उत्साह प्रदान करते थे। जब मैं पाश्चात्य देशोंमें प्रचार करने और ग्रन्थ–प्रणयन इत्यादि सेवाकार्य करनेमें तत्पर रहता था, तब मैं पूज्यपाद वामन

महाराज, पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज और अन्यान्य श्रेष्ठ वैष्णवोंसे परामर्श प्राप्ति हेतु पत्र लिखता था। पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजजी बिना किसी विलम्बके मेरे पत्रोंका उत्तर देते थे। वे मुझे और अधिक ग्रन्थोंका प्रणयन करने और विदेशोंमें सर्वत्र प्रचार करनेके लिए उत्साह प्रदान करते थे। मैं उन्हें कभी भूल नहीं सकता हूँ। मैं पूज्यपाद भक्तिवेदान्त वामन महाराज और पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज—इन दोनोंको अपना शिक्षा गुरु मानता हूँ। इन दोनोंने श्रील गुरु महाराजजीके विचारोंको समझनेमें मेरी जो सहायता की, मेरा जो पारमार्थिक पालन–पोषण किया है तथा सेवाकार्यों हेतु मुझे जो प्रेरणा प्रदान की है, मैं शब्दोंके द्वारा उसका वर्णन नहीं कर सकता।

यद्यपि मैं उन्हें शिक्षा गुरुके रूपमें सम्मान प्रदान करता था, किन्तु वे भी अपने अन्तिम समय तक मुझे साष्टाङ्ग प्रणाम किया करते थे। मेरी अनुपस्थितिमें मेरी पादुका तकको भी प्रणाम करते थे।

'तृणादपि सुनीचता' की प्रतिमूर्ति पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराजजीके अतिरिक्त और कौन ऐसा कर सकता है? वास्तवमें जो जितना उन्नत होता है, वह उतना ही अधिक विनम्र और शिष्ट होता है। पूज्यपाद त्रिविक्रम महाराज स्वयं इतने श्रेष्ठ भक्त थे कि सम्पूर्ण विश्वासियोंकी सहायता कर सकते थे, तथापि वे मुझे लिखते थे—"आप गुरु–गौराङ्गकी जिस प्रकारसे सेवा कर रहे हैं, हम वैसी सेवा किसी भी जन्ममें नहीं कर सकते। मैं सदैव आपकी सेवा–प्रवृत्तिको देखकर बहुत प्रभावित होता हूँ। आप बहुत लम्बे समय तक प्रचार करें, अनेकानेक ग्रन्थोंका लेखन और प्रकाशन करें, यही मेरी गुरुदेवके श्रीचरणोंमें प्रार्थना है।"

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजीकी तिरोभाव–तिथि

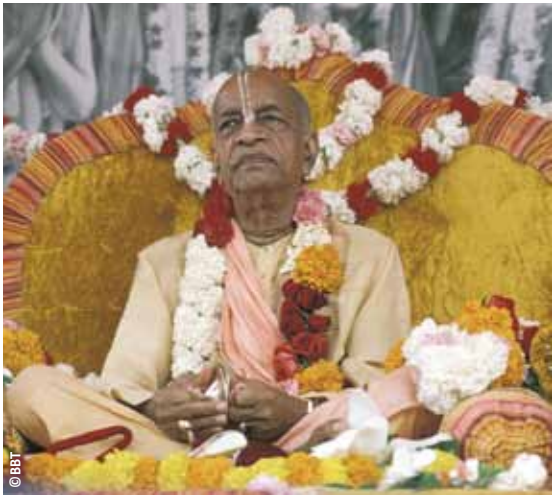

कार्तिक–मासकी शुक्ला–चतुर्थीका दिन विश्वविख्यात श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजीका तिरोभाव–दिवस है।

"श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज मेरे शिक्षागुरु एवं प्रिय बन्धु हैं। उनका मेरे प्रति निर्देश था कि मैं उनके शिष्योंको भजनपथ प्रदर्शन करूँ, इसलिए आज मैं उनकी उसी निर्देशका पालन कर रहा हूँ।''

श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराजजीके प्रणाम–मन्त्रमें 'गौरवाणी' शब्द आता है, उसका अर्थ क्या है? गौरवाणी अर्थात् श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी। वे गौरवाणी प्रचार करनेके कारण रूपानुग थे, क्योंकि श्रील रूप गोस्वामीने ही श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी अर्थात् श्रीचैतन्य महाप्रभु जगत्को जो देना चाहते थे, उसे जगत्में प्रचार किया था। अतएव मैंने देखा और अनुभव भी किया है कि श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज उत्तम श्रेणीके रूपानुग–वैष्णव थे। उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवतम्, श्रीचैतन्य चरितामृत तथा अन्यान्य अनेकों ग्रन्थोंका अत्यधिक सरल अनुवाद तथा व्याख्या प्रस्तुत की है।

श्रील स्वामी महाराज इस जगत्में 'राधा–दास्यम्' प्रदान करनेके लिये ही आये थे। उन्होंने श्रील रूप गोस्वामी, श्रील सनातन गोस्वामी आदि गोस्वामियोंके विचारोंका ही जगत्में प्रचार किया है। उन्होंने षड् गोस्वामियोंकी विचारधाराको ही नयी एवं सरल–सहज शैलीमें प्रस्तुत किया है। उन्होंने ISKCON की प्रतिष्ठा की है। ISKCON का तात्पर्य क्या है? उन्होंने श्रील जीव

गोस्वामी द्वारा स्थापित विश्ववैष्णव–राजसभाको ही थोड़ेसे परिवर्तनके साथ अंग्रेज़ी भाषामें ISKCON नाम प्रदान किया है। वास्तवमें ISKCON नाम सनातन है।

श्रील स्वामी महाराज इस ISKCON के एक सदस्य हैं। जिनमें उनके जैसे गुण नहीं है, वे इस ISKCON के सदस्य नहीं हैं। मेरे शिक्षा गुरु श्रील स्वामी महाराजने हमारे पूर्वाचार्योंके विचारोंका ही प्रचार किया है।

जो हृदयसे अपने श्रील गुरुदेवके आचरण और उपदेशको पालन करते हैं, वे ही यथार्थ शिष्य होते हैं। जिन्होंने परमपूज्यपाद श्रील स्वामी महाराजजीसे बाह्य रूपसे दीक्षा तो ग्रहण की हैं, किन्तु उनके आदेश–उपदेशका पालन नहीं करते, वे यथार्थ शिष्य नहीं हैं। यही भागवत–परम्पराका विचार है।

श्रील स्वामी महाराजजीके आचार और विचारका पालन करनेकी चेष्टा करें, किन्तु उनका अनुकरण नहीं। उनके विचार, सिद्धान्त, आचरण और भावोंको आन्तरिक रूपसे समझकर उनका अनुसरण करना चाहिए।

मैं श्रील स्वामी महाराजसे प्रार्थना करता हूँ कि वे हम सबपर कृपा वर्षण करें जिससे हम सभी श्रीश्रीराधाकृष्ण और श्रीगौर–नित्यानन्द प्रभुकी सेवा कर सकें।

नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिश्रीरूप सिद्धान्ती गोस्वामी महाराजकी आविर्भाव–तिथि

श्रीश्रीमद्भक्तिश्रीरूप सिद्धान्ती गोस्वामी महाराजजीका आविर्भाव १३१३ बङ्गाब्द कार्त्तिक शुक्ला पञ्चमी, १२ अक्टूबर सन् १९०६ ई. सोमवारको वर्त्तमान बङ्गलादेशके अर्न्तगत बरिसाल जिलेमें एक सम्पन्न और धार्मिक परिवारमें हुआ था। उनमें बचपनसे ही श्रीभगवानके नाम, रूप, गुण, लीलाके प्रति रुचि परिलक्षित होने लगी थी। उनके बचपन का नाम शिवशंकर था।

कॉलेजमें अध्ययन करते समय जगद्गुरु श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर प्रभुपादके अन्तरङ्ग परिकर नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिविवेक भारती गोस्वामी महाराजके मुख निःसृत गौरवाणीको सुनकर वे बड़े ही प्रभावित हुए। तत्पश्चात् सन् १९२४ में घर–बार, माता–पिता आदि सबको छोड़कर श्रीधाम मायापुरमें फाल्गुन पूर्णिमाके

थे। श्रील गुरुदेवके अप्रकट होनेके विषयमें ज्ञात होते ही वे श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें उपस्थित हुए। हमलोगोंने उन्हींके आनुगत्यमें परमाराध्यतम श्रीश्रीगुरुदेवको समाधि प्रदान की। इतना ही नहीं, उन्होंने कृपा करके श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिका सम्मत संविधान और रूपरेखा भी प्रस्तुत कर दिया। इनके इन सब कल्याणजनक कार्योंसे समितिके सदस्यगण सदा–सर्वदा इनके ऋणी रहेंगे।

अपने अन्तिम दिनोंमें श्रील भक्तिश्रीरूप सिद्धान्ती महाराज कोलकाता स्थित अपने मठमें रहते थे एवं वहीं पर ही वे १७ सितम्बर, १९८५ को अप्रकट लीलामें प्रविष्ट हुए।

गोपाष्टमी

इसी कार्तिक–मासमें ही श्रीकृष्णकी बाल्य लीलाके समाप्त होनेपर उनकी पौगण्ड लीला प्रारम्भ हुई थी तथा वे प्रथम बार बछड़ोंको चरानेके लिए घरसे बाहर निकले थे। श्रीकृष्णकी आयु छोटी होनेके कारण श्रीनन्द बाबाने उन्हें केवल बछड़े चरानेकी ही आज्ञा दी थी, गैयाएँ नहीं। जिस दिन श्रीकृष्ण गोप बनकर

बछडे चरानेके लिए पहली बार बाहर गये थे, उस दिन अष्टमी तिथि थी, इसलिए तभीसे यह तिथि गोपाष्टमी कहलाती है।

जब श्रीकृष्णने कैशोर अवस्थाको प्राप्त किया, तब श्रीनन्द बाबाने इसी गोपाष्टमीके दिन ही उन्हें गैयाओंको चरानेकी भी आज्ञा प्रदान की थी।

श्रीकृष्ण बछड़ों और गैयाओंको चरानेके लिए क्यों जाते हैं? श्रीकृष्ण गाय चरानेके बहाने अपने घरके बन्धनसे तथा माता–पिता और वृद्ध गुरुजनोंकी दृष्टिसे बचकर वनमें श्रीमती राधिका आदि गोपियोंसे मिलते हैं। गोपाष्टमी तिथि श्रीकृष्णकी गोपियोंके साथ अन्तरङ्ग मिलनकी अभिलाषाको पूर्ण करानेवाली तिथि है।

शरद्–ऋतुमें वृन्दावनकी शोभा एवं गैयाएँ चरानेके उद्देश्यसे श्रीकृष्णका वृन्दावनमें प्रवेश

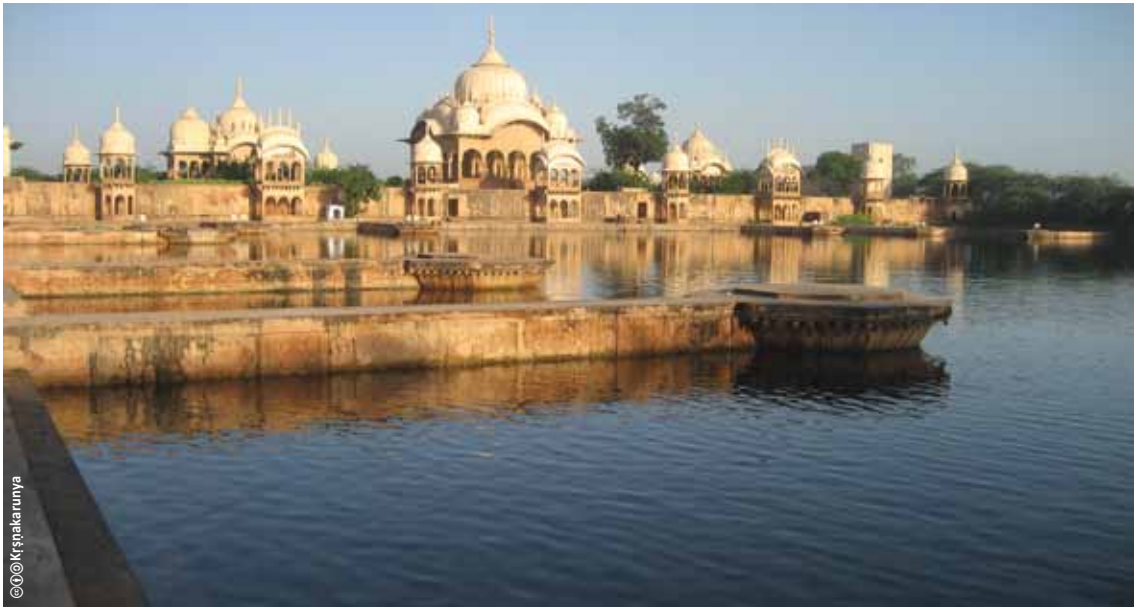

सर्वप्रथम शरद ऋतुमें ही अच्युत श्रीकृष्णने अपने सखाओं सहित वनमें प्रवेश किया था। शरद् ऋतुमें वृन्दावन अत्यन्त मनोहर रूप धारण करता है। वर्षा ऋतुमें नदियों तथा सरोवरोंका जल थोड़ा मैला हो जाता है, किन्तु जब वर्षा ऋतु समाप्त होती है तथा शरद् ऋतु प्रारम्भ होती है, तब मानसी गङ्गा, कुसुम सरोवर आदि सभी सरोवरोंका जल निर्मल हो जाता है। उनमें अत्यन्त सुगन्धित कमल खिल उठते हैं और उन कमलोंकी सुगन्धको सर्वत्र पहुँचानेवाली पवन धीरे–धीरे बहने लगती है। ऐसे सुन्दर वातावरणमें अच्युत श्रीकृष्ण गैयाएँ चरानेके लिए वनमें प्रवेश करते हैं।

(श्रीमती राधिकाके अत्यंत प्रिय शुक) श्रीशुकदेव गोस्वामी श्रीपरीक्षित महाराजसे कहते हैं–

इत्थं शरत्स्वच्छजलं पद्माकरसुगन्धिना।
न्यविशद् वायुना वातं सगोगोपालकोऽच्युतः॥

(श्रीमद्भा॰ १०/२१/१)

हे राजन्! अत्यन्त मनोहर शरद् ऋतुके कारण वृन्दावनकी शोभा अपूर्व लग रही थी। नदियाँ, तालाब और सरोवर पानीसे लबालब थे। सरोवरोंमें खिले हुए कमलकी भीनी–भीनी सुगंधको वहन करता हुआ समीर मंद–मंद बह रहा था। ऐसे रमणीय वातावरणमें

श्रीकृष्ण–बलदेव जब वनमें प्रवेश करते हैं [तथा जब श्रीकृष्ण श्रीबलदेवसे थोड़ा पीछे रहनेकी इच्छासे जान–बूझकर कुछ धीरे–धीरे चलने लगते हैं, उस समय] उनके वेणु–गीतसे युक्त तथा अनुरक्तजनोंके प्रति कटाक्ष करनेवाले मुखकमलका अपने नेत्रोंके द्वारा जो दर्शन करते हैं, वे ही धन्य हैं। नेत्रधारी व्यक्तियोंके लिये नेत्रोंको धारण करनेका इससे बढ़कर और अधिक कोई फल नहीं हो सकता।"

धन्याः स्म मूढगतयोऽपि हरिण्य एता
या नन्दनन्दनमुपात्तविचित्रवेशम्।
आकर्ण्य वेणुरणितं सहकृष्णसाराः
पूजां दधुर्विरचितां प्रणयावलोकैः॥

(श्रीमद्भा॰ १०/२१/११)

"अरी सखि! जब नन्दनन्दन श्यामसुन्दर विचित्र वेष धारण करके अपने वेणुपर मधुर तान छेड़ते हैं,

तब अज्ञानतम पशु–योनिमें जन्म ग्रहण करनेवाली मूढ़, बुद्धिहीन हिरणियाँ भी उसे सुनते ही अपने पति कृष्णसार हिरणोंके साथ उनकी ओर दौड़ती हैं और अपनी प्रेमभरी बड़ी–बड़ी आँखोंसे उन्हें निहारने लगती हैं। निहारती क्या हैं, सखि! अपनी कमल जैसी बड़ी–बड़ी आँखोंके तिरछे कटाक्षोंके द्वारा वे उनका अर्चन करती हैं और श्रीकृष्णके प्रेमभरे चितवनके द्वारा किया हुआ अपना सत्कार स्वीकार करती हैं। वास्तवमें उनका जीवन धन्य है। सखि, हम वृन्दावनकी गोपियाँ होनेपर भी इस प्रकार स्वयंको समर्पित नहीं कर सकती हैं। हमारे घरवाले मन–ही–मन दुःखी होने लगते हैं। कितनी विडम्बना है?।"

गोपियों द्वारा विरहमें अनुताप

इसी गोचारण लीलाके समय ही श्रीकृष्णसे विरह अनुभव करते हुए गोपियोंने अनुताप करते हुए कहा था—"हम इन हिरणियों जैसी सौभाग्यशाली नहीं हैं। लोग कहते हैं कि वे हिरणियाँ मूढ़ हैं, परन्तु वे हिरणियाँ नहीं, बल्कि हम ही मूढ़ हैं। कारण हम नहीं जानतीं कि किस प्रकार इन हिरणियोंकी भाँति श्रीकृष्णको प्रेम करना चाहिए। जब प्रेम अधिक होता है, तब वह समस्त सीमाओंको लाँघ जाता है। यद्यपि ये हिरणियाँ स्वभावसे लज्जाशील हैं, तब भी इन्होंने श्रीकृष्णके प्रेममें सभी सीमाओंको तोड़ दिया है। वे अपने हृदयके प्रेमको अपने प्रेमपूर्ण कटाक्षोंसे समर्पण कर रही हैं। परन्तु हम ऐसा नहीं कर सकतीं, अतएव हम दुर्भागिनी हैं। यदि हम मरकर अगले जन्ममें हिरणीके रूपमें जन्म ग्रहण कर सकें, तभी हम अपनेको सौभाग्यशाली समझेंगी।"

Painting by Śyāmarāṇī dāsī ©BBT

इसी गोचारण लीलाके समय ही गोपियोंने यह भी स्मरण किया था कि श्रीकृष्ण जब वेणु बजाते हैं, तब गायें स्तम्भित रह जाती हैं। भाव–नेत्रोंसे गोपियोंने श्रीकृष्ण और गैयाओं—दोनोंको देखते हुए विरहमें अनुताप किया था। उन्होंने देखा था कि यद्यपि पशुओंका

भीष्म-पञ्चक, उत्थान-एकादशी एवं श्रील गौर किशोरदास बाबाजी महाराजकी तिरोभाव तिथि

कार्तिक मासकी उत्थान एकादशीसे प्रारम्भ करके पूर्णिमा तकके पाँच दिन भीष्म पञ्चकके नामसे जाने जाते हैं। बहुतसे भक्त लोग इन पाँच दिनोंमें अनेक पारमार्थिक क्रियाएँ करते हैं। शयन एकादशीसे प्रारम्भ करके उत्थान एकादशी तकके चार मासोंमें भगवान् श्रीहरि शयन करते हैं और इस उत्थान एकादशीके दिन उठते हैं। इसीलिए इस एकादशीका नाम उत्थान एकादशी है। इसी उत्थान एकादशीके दिन ही विश्वविख्यात मेरे परमाराध्य परमगुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर प्रभुपादके गुरुदेव श्रील गौरकिशोर दास बाबाजी महाराजने नित्यलीलामें प्रविष्ट किया था।

श्रील गौरकिशोरदास बाबाजी महाराज व्रजमण्डल, गौड़मण्डल एवं क्षेत्रमण्डलमें सर्वत्र ही सिद्ध बाबाजीके रूपमें प्रसिद्ध थे। इनका आविर्भाव पूर्व बंगालके किसी ग्राममें हुआ था। ये बचपनमें ही घर-बार छोड़कर भगवद्भजन करनेके लिए श्रीधाम वृन्दावनमें चले गए। वहाँ सूर्यकुण्डमें कठोर वैराग्य अवलम्बनपूर्वक साधन-भजन करने लगे। वहाँ श्रीमधुसूदन दास बाबाजीके शिष्य वैष्णव सार्वभौम श्रीजगन्नाथ दास बाबाजी महाराजके संगमें रहकर हरिकथा इत्यादि श्रवण करते थे। इनका वैराग्य इतना कठोर था कि कभी-कभी भूख लगनेपर श्रीराधाकुण्ड अथवा यमुनाका कीचड़ भी खा लेते। फलस्वरूप इनकी आँखोंकी ज्योति चली गई। फिर भी छह गोस्वामियोंकी भाँति कभी राधाकुण्ड, कभी श्रीधामवृन्दावन, कभी नन्दगाँव-बरसाना तो कभी भाण्डीरवन आदि कृष्णलीला-स्थलियोंमें कुछ-कुछ दिनोंके लिए निवास करते और बड़े विरहमें कातर होकर उच्च स्वरसे 'कोथाय गो प्रेममयी राधे! राधे!' गान करते थे।

जब उनसे श्रीधाम वृन्दावनमें आराध्या देवी श्रीमती राधिकाका विरह सहन नहीं हुआ, तब वे श्रीधाम नवद्वीपमें उपस्थित हुए।

श्रीगौरकिशोरदास बाबाजी महाराज कुलिया शहरमें निवास करते हुए भजन करने लगे। यह स्मरण रहे कि उस समय तक श्रीगौर-आविर्भावस्थली श्रीधाम मायापुरका पूर्णरूपसे विकास नहीं हुआ था। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर भी श्रीधाम मायापुरसे कुछ दूर गंगातटपर अवस्थित श्रीगोद्रुम द्वीपमें एक भजनकुटीमें रहकर बड़े विप्रलम्भ भावसे भजन करते थे। बाबाजी महाराज प्रायः कुलिया शहरसे श्रील भक्तिविनोद ठाकुरके पास आते थे। इन दोनोंमें सर्वदा श्रीगौरसुन्दर एवं राधाकृष्णकी औदार्य-माधुर्यपूर्ण लीला-कथाओंकी चर्चाएँ होती थीं। इनका वैराग्य श्रील रघुनाथ दास गोस्वामीके समान अत्यन्त उच्च कोटिका था। बड़े-बड़े महात्मा एवं भजनानन्दी इनके दर्शनसे अपना जीवन कृतार्थ समझते थे। जगद्गुरु नित्यलीला प्रविष्ट श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती 'प्रभुपाद' ने इन्हीं महापुरुषको गुरुके रूपमें वरण किया था। बाबाजी महाराज सांसारिक विभिन्न प्रकारके प्रपंचों एवं भक्तिहीन विषयी और तथाकथित धर्मध्वजियोंसे दूर रहकर कुलिया नवद्वीपमें किसी प्रकार रहकर श्रील लोकनाथ गोस्वामी

व्रजवासियों द्वारा वैकुण्ठ–धामका दर्शन

इसी कार्तिक मासकी द्वादशीके दिन श्रीनन्द बाबा जब एकादशी व्रत पालन करनेके बाद ब्रह्ममूहुर्त्तसे थोड़ी देर पहले यमुनामें स्नान करनेके लिये गये, तो वरुण देवताने उनका अपहरण कर लिया। तत्पश्चात् नन्द बाबाको ढूँढ़ते हुए श्रीकृष्ण भी वरुणलोक गये और श्रीनन्द बाबाको पुनः व्रज ले आये।

इसी उपलक्ष्यमें श्रीकृष्णने समस्त व्रजवासियोंको ब्रह्महृदमें वैकुण्ठ–धामका दर्शन कराया था।

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजजीकी तिरोभाव तिथि

कार्तिक–मासकी शुक्ला चतुर्दशीके दिन मेरे शिक्षा गुरु श्रील भक्तिप्रमोद पुरी महाराजजीकी तिरोभाव–तिथि है। नवम्बर १९४६ ई॰ में मैं घर त्यागकर श्रीधाम नवद्वीप स्थित श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें आकर अपने परमाराध्य गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीके श्रीचरणकमलोंका आश्रय ग्रहण किया। उसके कुछ समय बाद १९४७ ई॰ में श्रीधाम नवद्वीप परिक्रमाके बाद ही श्रील गुरु महाराजने मुझे श्रीहरिनाम और दीक्षा प्रदानकर मेरे जीवनको धन्यातिधन्य कर दिया। उसके बाद मैं श्रील गुरुदेवके साथ श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिकी शाखा श्रीउद्धारण गौड़ीय मठ, चुँचुड़ा गया। वहींपर मैंने प्रपूज्यचरण श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी महाराजजीके चरणकमलोंका प्रथम बार दर्शन किया। उन्होंने भी कुछ समय पूर्व ही मार्च ३, १९४७ को संन्यास ग्रहण किया था।

मैं उनका दर्शन पाकर उनसे बहुत प्रभावित हुआ और मेरे परमाराध्य गुरुदेवने मुझे उनकी सेवामें नियुक्त कर दिया। मैं प्रतिदिन उनके साथ गङ्गामें स्नान करनेके लिए जाया करता था। तब मैं उनके बहिर्वास, कौपीन, कमण्डलु आदि लेकर जाता था। स्नानके बाद उनके गीले कपड़े, पानीसे भरे कमण्डलुको उठाकर मठ वापस आता था। तत्पश्चात् उन्हें प्रसाद परिवेशन करता था। साथ ही उनके द्वारा प्रदत्त अनेक आदेश–उपदेशोंको भी श्रद्धापूर्वक पालन करता था। मैं विनीत भावसे उनसे परिप्रश्न करता था और वे भी कृपापूर्वक अत्यन्त स्नेह सहित उसका उत्तर प्रदान करते थे।

श्रील प्रभुपाद उनकी निष्ठा, सम्पूर्ण समर्पण, भावपूर्ण सेवा और विशेषतः उनकी लिखनेकी शैली आदिसे अत्यन्त प्रसन्न थे। इसीलिए श्रील प्रभुपादने उन्हें सङ्कीर्त्तन, प्रचार, हरिकथा, बृहद्–मृदङ्गकी सेवा, विशेष करके दैनिक नदिया प्रकाश और गौड़ीय मठसे प्रकाशित होनेवाली अन्यान्य पत्रिकाओंमें प्रबन्ध लिखनेका दायित्व दिया था। बृहद्–मुदङ्गकी सेवा हेतु वे कोलकता, कृष्णनगर, मायापार आदि विभिन्न स्थानोंमें वास करते थे। गौरवाणी प्रचार हेतु उन्होंने केवल बङ्गाल ही नहीं, बल्कि भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें भ्रमण किया और सफलता भी प्राप्त की। कभी श्रील प्रभुपादजीके साथ और कभी श्रील प्रभुपादजीके

अक्रूरका व्रजमें आना एवं कृष्ण द्वारा कंसका वध

इसी कार्तिक मासमें ही श्रीकृष्णके हृदयकी अभिलाषाको जाननेवाली योगमायाने कंसके हृदयमें प्रेरणा दे करके उनके माध्यमसे अक्रूरको व्रजमें जानेके लिए आदेश दिलवाया तथा उन्हीं योगमायाने अक्रूरके माध्यमसे नन्द बाबा और व्रजवासियोंको मथुरा जानेके लिए प्रस्तुत कराया। अक्रूर स्वयं श्रीकृष्ण और बलदेवको मथुरा ले गये। इस घटनाके बाद गापियोंने अक्रूरको कभी भी अक्रूर कहकर सम्बोधित नहीं किया, बल्कि वे उन्हें 'क्रूर' कहकर उनके प्रति दोषारोपण करती थीं।

श्रीकृष्णने मथुरामें कंसका वध भी इसी मासमें ही किया था।

श्रीकृष्ण और बलरामका उपनयन संस्कार एवं कृष्ण द्वारा भाव–विभोर होकर माता यशोदाको पुकारना

इसी मासमें श्रीकृष्ण और बलरामका उपनयन संस्कार सम्पन्न हुआ था। व्रजमें पालन–पोषण होनेके कारण श्रीकृष्णके मनमें यह भाव था कि वे ग्वाल–बाल हैं और श्रीनन्द तथा श्रीयशोदा उनके माता–पिता हैं। किन्तु वसुदेव और देवकी विचार कर रहे थे कि यदि हम वैदिक संस्कृतिके अनुसार श्रीकृष्णका उपनयन संस्कार सम्पन्न करेंगे, तब श्रीकृष्णमें यह भाव आ जायेगा कि वसुदेव और देवकी ही मेरे वास्तविक माता–पिता हैं। इस प्रकार विचार करते हुए उन्होंने मथुरामें क्षत्रियोंके विधि–विधान अनुसार श्रीकृष्णका उपनयन–संस्कार सम्पन्न कराया।

उपनयन संस्कारके बाद माँसे भिक्षा माँगनी होती है। जब श्रीकृष्णको अपनी माँसे भिक्षा माँगने हेतु कहा गया तो वे हतप्रभ रह गये। यद्यपि देवकी सामने ही विराजामन थीं, फिर भी श्रीकृष्ण उनके निकट नहीं गये, बल्कि उन्हें तो अपनी मैया यशोदाजीका स्मरण हो आया। वे भाव–विभार होकर पुकारने लगे "हे माँ, तुम कहाँ हो?"

इस प्रकार देवकी और वसुदेवने प्रत्यक्ष देखा कि उपनयनका आयोजन करानेपर भी उनके मनकी अभिलाषा पूर्ण न हो सकी।

ब्रह्म–गायत्रीके श्रवण मात्रसे श्रीकृष्णके मूर्च्छित होनेका कारण

उपनयन संस्कारके समय श्रीगर्गाचार्यजीने श्रीकृष्णको ब्रह्म–गायत्री मन्त्र प्रदान किया था और श्रीकृष्णने जब इस मन्त्रको श्रवण किया, तब वे अचेतन हो गये। क्यों? क्योंकि श्रीमती राधिकाजी ही इस गायत्री मन्त्रकी अधिष्ठात्री देवी हैं।

उद्धव भी व्रजवासियोंको सान्त्वना देनेके लिए इसी मासमें व्रजमें आए थे।

मानसी गंगामें रासलीला पुष्टिकारी विभिन्न लीलाएँ

मानसी गंगामें नौका–लीला, वेणु–चोरी–लीला आदि रास–लीलाको पुष्ट करनेवाली श्रीकृष्णकी अगणित लीलाएँ भी इसी कार्तिक मासमें ही सम्पन्न हुई थी।

अमूल्य निधि

कार्तिक परिक्रमाके समय हमने हरिकथाके रूपमें आप लोगोंको जो अमूल्य निधि प्रदान की है, आप लोग उसे अपनी pocket में भरकर अपने साथ ले जाना। आप सब खाली pocket मत जाना। pocket आपका हृदय है, इसीलिए इन सभी विचारोंको ही अपने हृदयमें स्थान प्रदान करना तथा इन्हें अपने आचरणमें लाकर शुद्ध भक्त बननेका प्रयत्न करना।

करुणामय अभिभावकका निवेदन

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुकी अहैतुकी कृपासे ही विश्व यह जान सका है कि भगवत्ताका सार माधुर्य पर ही प्रतिष्ठित है। प्राचीन कालके समस्त वैष्णवचार्योंके मतानुसार ऐश्वर्य ही भगवत्ताका सार था। यद्यपि सभी भगवत् स्वरूप तत्त्वतः अभिन्न हैं, फिर भी 'रसो वै सः' (श्रुति), 'गूढं परं ब्रह्म मनुष्यलिङ्गम्' (भागवत) अर्थात् नराकृति परब्रह्म ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण ही माधुर्यके साक्षात् मूर्तिमान विग्रह हैं। वे रसिकशेखर एवं अखिलरसामृतमूर्ति हैं। श्रीकृष्णमें सभी रसोंका विकास अन्तिम सीमा तक देखा जाता है। ब्रजविहारी श्रीकृष्णमें लीलामाधुर्य, गुणमाधुर्य, वेणुमाधुर्य और रूपमाधुर्य परिपूर्ण रूपमें परिलक्षित होता हैं। श्रीकृष्ण रसिकशेखर होनेके साथ–साथ परमकरुण भी हैं। प्रेमरसनिर्यासका आस्वादन करनेके लिए राधाभाव एवं उनकी गौरकान्तिको लेकर श्रीकृष्ण स्वयं ही श्रीचैतन्यमहाप्रभुके रूपमें अवतीर्ण हुए। उक्त चारों माधुरियोंका आस्वादन कर उन्होंने समस्त विश्वको उस प्रेमकी बाढ़में डुबो दिया। ऊँच–नीच, पवित्र–अपवित्र, पात्र–अपात्रका विचार किये बिना उन्होंने विश्वके निखिल जीवोंको प्रेम प्रदान कर कृतार्थ कर दिया। महाप्रभुकी कृपारूपी मेघमाला बंजर हृदयक्षेत्रमें भक्तिबीज वपनकर उसे अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित ही नहीं करती, अपितु उसमें प्रेमफलका उदय भी करा देती है।

अतएव हे साधको! श्रील प्रबोधानन्द सरस्वतीपादके वचनोंको दोहराते हुए मैं दाँतोंमें तृण धारणकर दीनतापूर्ण वचनोंके द्वारा पुनः पुनः आपके चरणोंमें प्रार्थना करता हूँ कि सब प्रकारके मतभेद, अनर्थ, अपराध ईर्ष्यादिका त्यागकर श्रीव्रजमण्डलकी लीला–स्थलियोंको स्वयं तथा अपने परिकर श्रीरूप–सनातन आदिके माध्यमसे पुनः प्रकाशित करनेवाले श्रीचैतन्यचन्द्रके चरणकमलोंमें अनुराग उत्पन्न करें। अनादि कालसे हम जन्म मृत्युके चक्रमें फँसे हुए हैं, किसी प्रकार इस जन्ममें वैष्णव–संगका कुछ सुयोग प्राप्त हुआ है। भगवान्की अहैतुकी कृपाकी प्राप्ति हुई है,

गुरु–वैष्णवोंकी सेवासे सुकृति बनाकर भक्तिराज्यमें प्रवेश करनेकी चेष्टाके द्वारा महाप्रभुके श्रीचरणकमलोंमें अनुराग उत्पन्न करें, अन्यथा समय निकल जायेगा तो पुनः नहीं आयेगा। यह कलिकाल है, कलह अपने आप ही उत्पन्न हो जाता है। इसलिए इस मतभेदरूपी खुजलाहटको त्यागकर महाप्रभु–नित्यानन्दप्रभुके चरणोंमें अनुराग उत्पन्न करनेकी चेष्टा करें। हरि–गुरु–वैष्णवोंकी सेवाके लिए समस्त प्रकारके मतभेद त्याग दें। श्रील प्रभुपादकी आज्ञाको शिरोधार्य करके मिल–जुलकर आश्रय विग्रहके आनुगत्यमें विषय विग्रहकी सेवा करें। एकतामें ही बल है।

स्वप्नमें भी वैष्णवोंसे विवाद मत करें। एक बार भी यदि किसीने नाम ग्रहण किया है, तो उसका भी आदर करें। जिस किसीने भी गुरुजीकी तनिक भी सेवा की है, उसके प्रति चिर ऋणी रहें, तभी हमारे भजनकी उन्नति होगी। यदि गुरुजीका नाम लेकर कुत्ता भी आ जाए तो उसका भी सम्मान करें।

श्रील गुरुदेवकी करुणाका निदर्शन

[प्रत्येक वर्ष इसी कार्तिक मासमें श्रील गुरुदेवने पुनः पुनः अनेकानेक भक्तोंको व्रजमण्डल परिक्रमाके समय अपने दर्शन, सङ्ग, हरिकथा, स्नेह, मधुरवचन, दीक्षा–शिक्षा इत्यादि प्रदान करके उन्हें परम धन्य बनाया है। व्रजके प्रति उनकी निष्ठाको जागृत किया है, उन्हें राधा–दास्यके प्रति लोभान्वित किया है तथा व्रजरस–धारामें निमग्न किया है।]

व्रजभक्ति और व्रजकी संस्कृति एवं विकासके लिये संकल्पित श्रील गुरुदेव

[इसी कार्तिक मासमें ही सम्पूर्ण विश्वमें श्रीकृष्णभक्तिके प्रचार–प्रसार, ब्रज–भक्ति और संस्कृतिके संरक्षण एवं विकासके लिए संकल्पित तथा विश्वशान्तिके लिए समर्पित भगीरथी प्रयास[३] एवं योगदानके लिए ब्रजाचार्य पीठ, श्रीधाम बरसाना एवं विश्व धर्म संसद (World Religious Parliament) नई दिल्लीके संयुक्त तत्त्वावधानमें ऊँचागाँव (बरसाना) स्थित ब्रजाचार्य पीठ पर दिनांक ३१ अक्टूबर, २००३ को आयोजित अलंकरण समारोहमें गुरुदेव ॐविष्णुपाद श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको विभिन्न वेदज्ञ पण्डितोंके द्वारा स्वस्तिवाचन और पुष्पाभिषेकके

उपरान्त ब्रजाचार्य पीठके पीठाधीश श्रीनारायण भट्टके वंशज श्रीयुत् दीपकराज भट्टने 'युगाचार्य' (Acharya of Millennium) की उपाधिसे विभूषित किया था।

श्रीयुत् दीपकराज भट्टने कहा था कि ब्रजभूमिमें बहुत समयके उपरान्त किसी सन्त या आचार्यको ब्रजवासियोंने अपने शाश्वत प्रेमका परिचय देते हुए युगाचार्यकी उपाधिसे विभूषित किया है।]

[३] जिस प्रकार भगीरथ अत्यन्त कठोर प्रयास अर्थात् तीन-तीन बार एकनिष्ठासे तपस्या करके ब्रह्मा, शिव और गंगाको प्रसन्न करनेके उपरान्त इस धराधाममें ले आये थे। उसी प्रकारके अभिलषित प्रयासको 'भगीरथी प्रयास' कहते हैं।

(३) श्रीमन्नित्यानन्द प्रभु एवं श्रीहरिदास ठाकुरकी भाँति जगतमें श्रीहरिनाम–संकीर्तन एवं शुद्ध रूपमें श्रीहरिनामभजनकी प्रणालीका आचार और प्रचारकर श्रील महाराज 'कृष्णनाम' सेवा सम्पादित कर रहे हैं।

इस प्रकार युगपत् कृष्णधाम, कृष्णकाम एवं कृष्णनामके प्रति सेवापरायण श्रील महाराजको इस 'युगाचार्य' की उपाधिसे विभूषित करना यथार्थ ही है। मैं उनके चरणोंमें नमन करता हूँ।]

Photos ©Śaradā dāsī

श्रीश्रीभागवत पत्रिकाकी नयी Website

www.bhagavatpatrika.com

श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गकी कृपासे अब श्रीश्रीभागवत पत्रिका online पर भी www.bhagavatpatrika.com नामक website पर उपलब्ध है। इस नयी website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके कुछेक पुराने अंक एवं नयी संख्याओंके अंश download किये जा सकते हैं। साथ ही इस वर्षकी व्रत–तालिका भी download की जा सकती है। मुख्यत: अब इस website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके नये सदस्य बनने या सदस्यता नवीकरण करानेके लिए सुविधा भारतीय तथा अन्तराष्ट्रीय भक्तोंके लिए उपलब्ध करायी गयी है।

विशेष ज्ञातव्य

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके पाठकों और सदस्योंको सूचित किया जाता है कि श्रीपत्रिका इस सम्पूर्ण आठवें वर्ष श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके विरह–विशेषांकके रूपमें प्रकाशित होगी। अत: इस वर्ष पत्रिकाकी दो–दो संख्याएँ एक साथ दो–दो महीनोंमें एक बार प्रकाशित होंगी।

श्रील गुरुदेवके प्रति अपनी कृतज्ञताका स्मरण करते हुए श्रील गुरुदेवके चरणाश्रित (१) श्रीयुता उमा देवी दासी (मथुरा), (२) श्रीतिलकराजएवंसाधनाबुद्धिराजा(दिल्ली),(३)श्रीविष्णुदास(ह्यूस्टन)और (४) श्रीसाधुराम एवं श्रीमती आशारानी देवी (दिल्ली) ने इस विरह–विशेषाङ्कके प्रकाशन हेतु आंशिक आर्थिक योगदानके द्वारा विशेष सेवा–सौभाग्यको वरण किया है। इन सबकी विशेष सेवाके लिये श्रील गुरुदेव अपने नित्यधामसे इन पर विशेष कृपा वर्षित करें–यही श्रील गुरुदेवके अभय चरणकमलोंमें विनम्र प्रार्थना है।

'श्रीश्रीभागवत पत्रिका' का सम्पादक एवं कार्यकारी मण्डल